वर्ष २ अंक १६
विक्रम संवत् २०७६ पौष
जनवरी २०२०

आर्ष क्रान्ति

वैदिक समाज व्यवस्था के लिए समर्पित

विश्व हिन्दी दिवस

की शुभकामनाएं

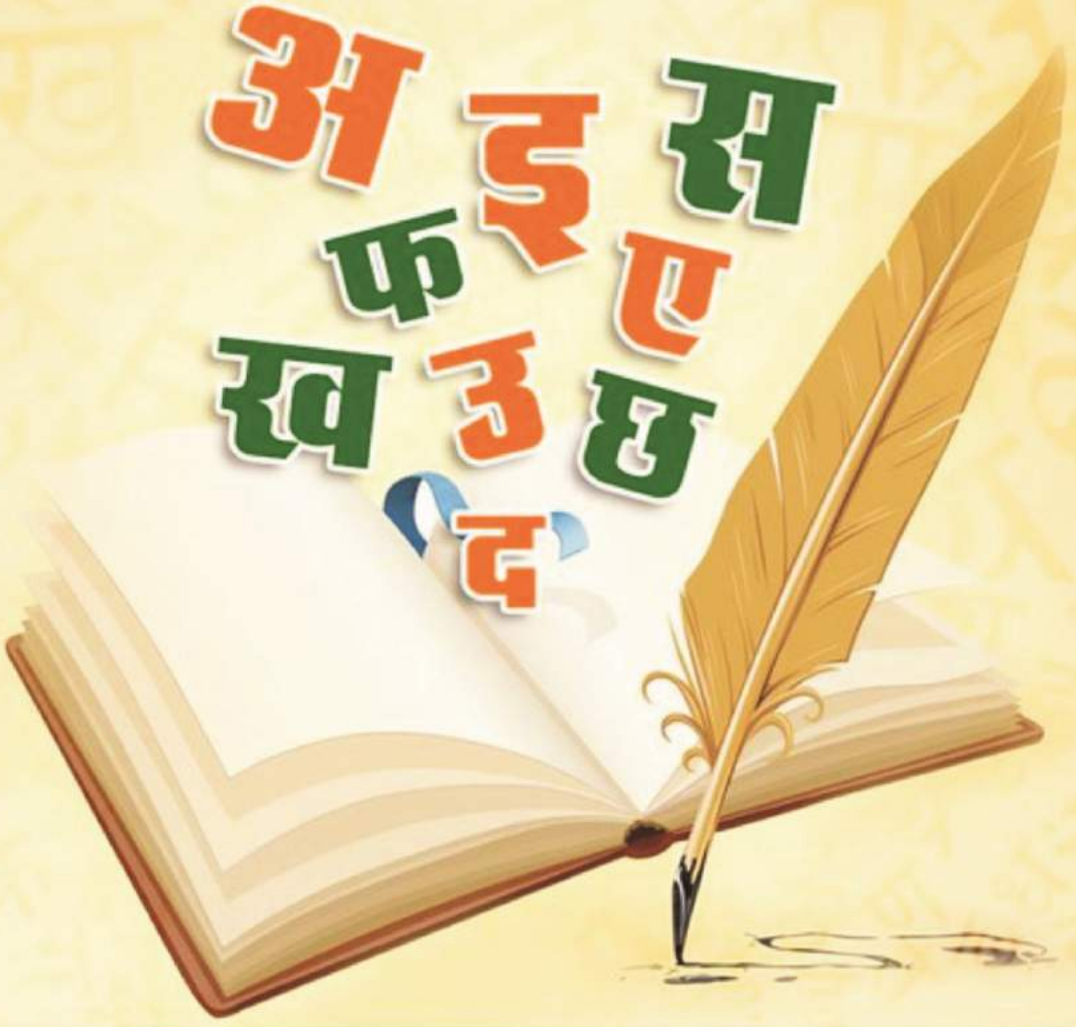

ओ३म्

आर्य लेखक परिषद् का मुख पत्र

आर्ष क्रान्ति

जनवरी २०२०

वर्ष–२ अंक–१६,
विक्रम संवत् २०७५
दयानान्दाब्द– १९५
कलि संवत् – ५११९
सृष्टि संवत् –१,९६,०८,५३,११९

प्रधान सम्पादक
वेदप्रिय शास्त्री
(७६६५७६५११३)

❖

सम्पादक
अखिलेश आर्येन्दु
(८१७८७१०३३४)

❖

सह सम्पादक
प्रांशु आर्य (कोटा)
(९९९३९७०९४०)

❖

आकल्पन
प्रवीण कुमार (महाराष्ट्र)

❖

सम्पादकीय कार्यालय
ए–११,त्यागी विहार, नांगलोई,
दिल्ली–११००४१
चलभाष– ८१७८७१०३३४

अनुक्रम

विषय

१ आर्य समाज (सम्पादकीय)
२ वेदकाल, आर्यों का निवास और इतिहास.....
३ Varnas: Please understand each other
४ मनुस्मृतिः प्लस–माइनस
५ Understanding Hinduism
६ मूर्खता अथवा षड्यन्त्र ?
७ पेरियार द्वारा ईश्वर पर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर
८ आर्य आक्रमण सिद्धांत...
९ मकर संक्रांति पर्व आया है
१० हिंदी का ही नहीं देवनागरी का भी
११ हिंदी महिमा
१२ त्रिफला
१३ चाहा मैंने कितना भी
१४ पाती आयी है

ईमेल – aryalekhakparishad@gmail.com
वेबसाइट – https://aryalekhakparishad.com/
फेसबुक आर्य लेखक परिषद्

Digital

आर्य समाज

गतांक से आगे

आर्य समाज में दोहरे चरित्र के लोगों का वर्चस्व कोई नया नहीं है, 50 वर्ष पूर्व ही पतन प्रारम्भ हो गया था। कभी किसी सच्चे आर्य ने आर्य समाज को अपने चरित्र के द्वारा हानि नहीं पहुंचाई और न ही उसकी सम्पत्ति हड़प कर निजी उपयोग में लिया। दोहरे चरित्र के घुसपैठियों के बारे में कुंवर सुखलाल मुसाफिर ने कभी कहा था –

जिन्हें संसार में संसार का उपकार करना था।
जिन्हें दुनिया में वैदिक धर्म का प्रचार करना था।
अनाथों और अछूतों का जिन्हें उद्धार करना था।
जिन्हें इस देश और जाति का बेड़ा पार करना था।
उन्हें देखो तो बाहम बरसरे पैकार बैठे हैं।
वजूद अपना मिटाने के लिए तैयार बैठे हैं।
समाजों में सदा जो संगठन के गीत गाते हैं।
बड़े सरमन सुनाते हैं बड़ी बातें बनाते हैं।
खुदाई का जो खुद को बेगरज खादिम बताते हैं।
जो इनके दिल टटोलो तो सरासर स्याह पाते हैं।
पदों की लालसा में रोज लड़ते और लड़ाते हैं।
अदाएं शासकों की हैं मगर सेवक कहाते हैं।
यही लीडर रहे तो हो चुका प्रचार वेदों का।
इन्हें तो खून करना है दयानन्द की उम्मीदों का।।
ऋषि सौभाग्य से भारत में जो एक बार आ जाए।
रुखे अनवर मुसाफिर आके जो एक बार दिखलाए।
हमारे दंभ को देखे और इस आचार पर जाए।
तो सच कहता हूं गैरत से बिना ही मौत मर जाए।।

ऐसी स्थिति में क्या कुछ किया जा सकता है? यह विचारणीय है।

उपचार तो हो सकता है परन्तु उपचारक, प्रचारक और परिचारक आदि बलवती इच्छाशक्ति वाले, श्रद्धामय, मिशनरी भाव से समर्पित होकर कार्य करने वाले होने चाहिए। इसी कार्य को जीवन का लक्ष्य बनाकर इसी के लिए जीने मरने का सुदृढ़ संकल्प लेकर चलने वाले लोगों की महती आवश्यकता है। याद रहे किराए के रोने वाले दिल से कभी नहीं रोते। सफेद वस्त्र पर छोटा सा दाग भी दूर से दिखाई पड़ता है। अतः उसे श्वेत शुद्ध बनाए रखने पर विशेष ध्यान रखना होता है। आर्य समाज के प्रत्येक कार्यकर्ता को इस बात का सदा ध्यान रखकर सतर्क और सचेष्ट रहना होगा। आर्य समाज का पतन दो ही कारणों से हुआ है, एक चरित्र हीनता और दूसरा आर्थिक अशुचिता। इन्हीं को ठीक कर लिया जाए तो पुनः संगठन को प्राणवान बनाया जा सकता है।

आर्य समाज एक क्रांतिकारी आंदोलन है, कोई व्यापारी कंपनी नहीं और न मनोरंजन करने वाला सिनेमा थिएटर और नाटक कंपनी है। यहां जोखिम उठाकर संकटों और मुसीबतों को आमंत्रण देने वाले, हथेली पर शिर और जान रख कर चलने वाले सतर्क वीर योद्धाओं की ही जरूरत है। आर्य समाज का अर्थ है स्वस्थ समाज जिसे बीमार लोग नहीं बना सकते। आज स्थिति यह है कि आर्य समाज का कोई सदस्य यदि कभी भी आर्य समाज में न जाए तो उसका कोई कार्य रुकता और बिगड़ता नहीं। तब आर्य समाज जाकर वह समय क्यों नष्ट करे। वास्तव में समाज वह होता है जहां न जाने से व्यक्ति का प्रत्येक कार्य बिगड़ जाता है, वहां जाना ही पड़ता है। ऐसा आर्य समाज बनाया नहीं जा सका, अभी बनाना शेष है।

आज हम यह भी कहने की स्थिति में नहीं है कि आर्य समाजें क्या करें। इन्हें कोई परामर्श या युक्ति बताना अंधे के आगे रोना और बहरों को कथा सुनाने जैसा ही है। इन्हें तो इसके योगियों ने समाधिस्थ कर दिया है। यह लोग यम नियमों का पालन इतनी निष्ठा से कर रहे हैं कि वैराग्य की पराकाष्ठा पर पहुंच चुके हैं, संसार से इन्हें कुछ लेना–देना नहीं है, सब परलोक बनाने में लग रहे हैं। तब संसार का उपकार कैसे होगा जो कि आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है? वास्तविक बात यह है के यह जो आर्य समाज हैं ये केवल नाम के ही आर्य समाज हैं काम के बिल्कुल नहीं। इनमें जो नेता बैठे हैं वह नाम के ही आर्य हैं काम के बिल्कुल नहीं। वर्तमान आर्य समाज उस मनुष्य जैसा है जिसका मस्तिष्क तो ठीक है परन्तु बाकी शरीर लकवा ग्रस्त है। इसलिए यह है कुछ

कार्य नहीं कर सकता। बिना किसी का सहारा लिए उठ भी नहीं सकता परन्तु कोई इसे सहारा देने की इच्छा भी नहीं रखता। ऐसी स्थिति में सामयिक समस्याओं को लेकर यदि यह कोई बयान देता है तो उसका कोई मूल्य नहीं। अभी तो यही पता नहीं कि असली और नकली नेता कौन है? तीन दलों का दलदल है। इसलिए वर्तमान में इस आर्य समाज से महर्षि दयानन्द के सपने साकार करने की आशा करना व्यर्थ है। प्रश्न होता है कि फिर क्या किया जाए? इसका उत्तर है कि वास्तविक आर्य समाज के अस्तित्व की रक्षा और सुदृढ़ीकरण यही वर्तमान में मुख्य करणीय कार्य है। यह भी बता दूं कि वर्तमान में आर्य समाज को शक्तिशाली बनाने का उत्तम अवसर है यदि आर्य लोग इस पर ध्यान दें तो।

करना यह है कि सारे देश में बिखरे हुए वास्तविक आर्यों को खोज कर एकत्र किया जाए और उनकी पंजिका तैयार की जाए।

१–जिस परिवार में कर्मकांड सम्पादन हेतु पौराणिक ब्राह्मण न बुलाया जाता हो, संस्कार विधि के अनुसार ही कर्मकांड संपादित होता हो।

२–जो परिवार जातिवाद से हटकर गुण कर्मानुसार आर्य परिवारों से ही वैवाहिक सम्बन्ध बनाने को तैयार हो।

३–जो अपनी आय का शतांश ईमानदारी से देने को तैयार हो।

४–जो महर्षि दयानन्द और आर्य समाज के लिए ही जीवन समर्पित करने वाला हो, ऐसा परिवार वास्तविक आर्य परिवार है।

ऐसे 100 परिवार भी यदि पूरे देश में मिल जाएं तो उनका संगठन वास्तविक आर्य समाज होगा।

इसके पश्चात् इनकी कार्यप्रणाली की रूपरेखा बने।

अपनी विरासत अपने जीवन मूल्यों, अपने जीवन दर्शन, अपने आहार–विहार व्यवहार और अपनी भाषा संस्कृति और धर्म का स्वाभिमान यदि हम नहीं करेंगे तो और कौन करेगा? हम चर्चा तो वैदिक जीवन दर्शन की करते हैं और जीते हैं अवैदिक जीवन दर्शन। तब प्रतिष्ठित कौन होगा? यही दोहरा चरित्र हमें खाए जा रहा है।

सर्वप्रथम आप अपनी भाषा जो संस्कृत और हिंदी है उसको प्रतिष्ठा प्रदान करें और अपने वैदिक कर्मकांड को प्रतिष्ठित करें। प्रत्येक परिवार के प्रत्येक सदस्य को नित्य का कर्मकांड और मंत्र आदि कंठस्थ हों और उन पर श्रद्धा हो। इसके पश्चात् समाज के सभी सदस्य मिलकर सब के बालकों की उत्तम शिक्षा की व्यवस्था करें और सभी परिवार अपना एक – एक पुत्र और पुत्री आर्य समाज को समर्पित करें जो केवल आर्य समाज का ही कार्य करें। उनका भरण–पोषण आर्य समाज करें। इसी प्रकार सभी गुरुकुलों को एक ही विश्वविद्यालय से जोड़कर महर्षि दयानन्द की पठन–पाठन वाली पाठ विधि अपनाकर आर्ष शिक्षा प्रणाली स्थापित की जाए और निःशुल्क शिक्षा देने की व्यवस्था हो। प्रत्येक परिवार के रोगियों का इलाज समाज की ओर से हो। इसके लिए एक विशाल आधुनिक संसाधनों से लैस चिकित्सालय और आयुर्वेदिक औषध निर्माण शाला की स्थापना की जाए।

समाज के निर्धन और बेरोजगार लोगों के रोजगार और आर्थिक सुदृढ़ता की व्यवस्था भी आर्य समाज करें। यह सब कार्य आर्य समाज सदस्यों की आय के शतांश और दान से प्राप्त धन से बनाए गए कोष के द्वारा करें।

कर्मकांड सम्पादन के लिए आर्य समाज एक उप समिति बनाए जो सर्वत्र एक ही ढंग से कर्मकांड सम्पादित करवाए। इससे कर्म कांडीय एकता एकरूपता बनी रहेगी और पंडागीरी नहीं पनपेगी।

राजनीति के क्षेत्र में आर्य समाज उसी पार्टी को समर्थन दे जो आर्य समाज की हितैषी और उसे प्रतिष्ठित करने में सहयोगी हो। अपनी जनशक्ति का सम्मिलित प्रयोग एक ही स्थान पर हो।

आर्यसमाज स्वयं की आवश्यकता के अनुसार गाय के शुद्ध दूध और घी की व्यवस्था स्वयं करें और यज्ञ के लिए शुद्ध गौ घृत हवन सामग्री और उत्तम समिधाओं का उत्पादन भी स्वयं करें। अर्थ उपार्जन के लिए अपनी अच्छी और सच्ची साख कायम करें। शुद्धता की गारंटी देते हुए आवश्यक वस्तुओं का व्यापार करें।।

आर्य समाज के संविधान में अब तक किए गए सभी संशोधन रद्द कर दिए जाएं। केवल स्वामी दयानंद द्वारा बनाए गए नियम, उप–नियम और संविधान को पुनः प्रतिष्ठित किया जाए इसके पश्चात् प्रचार कार्य की योजना बने। योजना को चरणबद्ध करके उसके

अनुसार वार्षिक बजट बनाया जाए। वर्ष के अंत में कार्य और कार्यकर्ताओं का मूल्यांकन और समीक्षा हो। त्रुटियां दूर करके पुनः प्रतिवर्ष की कार्य योजना बनाई जाए। संगठन के पदाधिकारी और प्रधान कर्मठ सिद्धांतनिष्ठ, न्यायप्रिय, बुद्धिमान और समर्पित व्यक्तित्व वाले हों, उनके अनुशासन में रहकर समाज का कार्य हो। प्रत्येक उपदेशक प्रचारक और विद्वान् संगठन द्वारा मान्यता प्राप्त हो।

प्रचार प्रणाली

वर्तमान में आर्य समाज का प्रचार कार्य बहुत खर्चीला और प्रभाव शून्य है। हमने कई बार कहा है कि आर्य समाज एक क्रान्ति है, एक आंदोलन है और क्रान्ति केवल क्रांतिकारी ही कर सकते हैं मदारी नहीं। इसलिए आर्य समाज का प्रचार कार्य पैसा कमाने का तरीका या व्यवसाय बना कर कदापि नहीं हो सकता। आर्य समाज के उपदेशक संन्यासी, पुरोहित सब पूंजीपतियों के आसपास घूमते रहते हैं और अपना टिमटिमाता दीया वहीं लिए घूमते रहते हैं जहां पहले से ही हजार वाट का बल्ब जल रहा होता है। ग्रामों में झुग्गी–झोपड़ियों के अंधेरे में जाकर उजाला करने वाला कोई नहीं है क्योंकि प्रचारकों का उद्देश्य प्रचार न होकर अधिकाधिक अर्थ लाभ करना होता है। गांव के लोग स्वामी दयानन्द को तो जानते ही नहीं और आर्य समाज को भी इस अर्थ में जानते हैं कि जो ईश्वर को नहीं मानता और भगोड़ी शादियां कराने का धंधा करता है वह आर्य समाज है। अतः आमजन आर्य समाज का सत्य स्वरूप कैसे समझ सकता है और उसके प्रति आस्थावान कैसे बन सकता है?

हमारे पास आर्य समाज की प्राथमिक शिक्षा देने वाले न तो योग्य उपदेशक, प्रचारक हैं और न ही प्रचार सामग्री है। तब आमजन में प्रचार कैसे होगा। यह विचारणीय है। इसलिए दो तरह के उपदेशक, प्रचारक चाहिए – एक ग्राम स्तर के और दूसरे सिद्धांत और इतिहास से परिचित जनों के लिए। आर्य समाज और उसके साहित्य के प्रति रुचि पैदा करने वाली प्रभावशाली प्रचार सामग्री निशुल्क वितरण के लिए पर्याप्त मात्रा में प्रत्येक उपदेशक, प्रचारक के पास होनी चाहिए। इतना सब यदि कर सकते हैं तो मिलकर करो, लोग आर्य समाज की ओर दौड़े चले आएंगे। इससे अधिक जानने के लिए हमारे साथ जुड़े। महर्षि दयानन्द की वैचारिक क्रान्ति अमर रहे, वैदिक धर्म की जय हो।

– वेदप्रिय शास्त्री

आर्ष क्रान्ति के सुधि पाठकों से

समाज सुधार, संस्कृति उन्नयन और धर्म जिज्ञासा क्षेत्र की अनेक पत्रिकाएं सोशल मीडिया पर आपने देखी और पड़ी होगी । आर्ष क्रांति पत्रिका का तेवर और स्वरूप कैसा है इसे जानने की जिज्ञासा आपके मन में पैदा होती है, तो यह समझना चाहिए आप एक विचारवान और जिज्ञासु किस्म के बुद्धिमान व्यक्ति हैं । हमें आप जैसे क्रांतिकारी और प्रगति गामी विचार वान व्यक्ति का साथ चाहिए। फिर देर किस बात की । नीचे लिंक पर जाइए और फार्म भर कर हमें भेज दीजिए । अब आप जुड़ गए हैं ऐसी संस्था और पत्रिका से जो एक आदर्श समाज, उन्नतशील संस्कृति और मानव मूल्यों के धर्म की स्थापना के लिए कृतसंकल्प है । आप एक शुभ संकल्पवान व्यक्ति हैं और यह पत्रिका भी शुभ संकल्पों को मूर्त रूप देना चाहती है, एक आदर्श समाज निर्माण में हमारी संस्था और पत्रिका से जुड़कर आप अपना अमूल्य योगदान दे सकते हैं । आपका हमें इंतजार रहेगा।

इस लिंक पर क्लिक करके यह फार्म अवश्य भरें

http://bit.ly/aarshkranti

नोट – फॉर्म को भरने के लिए अपने मोबाइल / कंप्यूटर में इन्टरनेट अवश्य चालू रखे

वेदकाल, आर्यों का निवास और इतिहास लेखन का आधार : एक विश्लेषण

– अखिलेश आर्येन्दु

गतांक से आगे

पिछले अंक में वेद काल को लेकर कुछ देशी–विदेशी विद्वानों के मन्तव्यों, उनके प्रमाणों और तर्कों को जानने–समझने का प्रयास किया था। जिन प्रमाणों और तर्कों के आधार पर विद्वानों ने वेदकाल को एक निश्चित समय में बाधने का प्रयास किया है, वे प्रमाण ही सत्य और तर्क की तराजू पर ठीक नहीं उतरते हैं। भारतीय विद्वानों ने वेदकाल निश्चित करते समय जिन प्रमाणों का आधार लिया वे ग्रंथ–प्रमाण, सत्य और तर्क पर खरे नहीं उतरते हैं। वेदकाल का निर्धारण वैसा ही है जैसा कि इस ब्रह्माण्ड का निर्धारण करना। दरअसल, वेदकाल का निर्धारण करते समय विद्वानगण अपनी मान्यताओं, दुराग्रहों और मान्यताओं से ऊपर नहीं उठ पाते हैं। इस लिए जो भी कहते हैं वे सारे प्रमाण या तर्क सत्य के धरातल पर टिकते नहीं हैं। विडम्बना यह है कि विश्वविद्यालयों और इतिहास की पुस्तकों में वेदकाल और आर्यों के निवास के सम्बन्ध में वह ही पढ़ाया जाता है जो देशी–विदेशी विद्वान् अपने अल्प ज्ञान के आधार पर तय कर दिए। वेदकाल के सम्बन्ध में काल (समय) की एक सीमा तय कर दी गई कि इस सीमा के अन्दर ही रहकर भारत और भारत के इतिहासकार या विद्वान् वेदों के काल के समय का निर्धारण कर सकते हैं। यदि कोई निष्पक्ष होकर सीमा का अतिक्रमण करेगा तो उसके निष्कर्ष या बात मान्य नहीं होंगे। आज वेद के सम्बन्ध में मैक्समूलर, मैक्डानल और कीथ आदि के वेद के सम्बन्ध में दिए गए मनमाने निष्कर्षों को ही विश्वविद्यालयों और विश्व के इतिहास की पुस्तकों में पढ़ाया जाता है। इस कारण आज भी विश्व समाज कहता है कि इतिहास से ज्ञात होता है कि भारत में आर्य बाहर से आए और यहां के मूल निवासी द्रविणों को परास्त कर, यहीं वस गए। ऐसा ही निर्णय वेदकाल के सम्बन्ध में इतिहासकार देते दिखाई देते है। वेदकाल का निर्धारण और आर्यों के निवासादि एक बड़ा और महत्वपूर्ण विषय है। यह अंक आप को कैसा लगा, कृपया विधिवत् स्वाध्यायकर बताएं और पत्रिका समाज के लिए और अधिक उपयोगी कैसे हो सकती है, इस पर भी अपनी स्पष्ट सलाह दें।

–सम्पादक

वेद में ज्योतिष का वर्णन?

तिलक ने वेदकाल का निर्धारण ज्योतिष के आधार पर करने की कोशिश की है। लेकिन वेद में ज्योतिष का वर्णन किस मन्त्र में है जिससे वेदकाल के निर्धारण में सहायता मिल सके। तिलक भूल गए कि ज्योतिष वेद का अंग है। उसके आधार पर वेदकाल का निर्धारण किस तरह किया जा सकता है, यह समझ से परे है। नक्षत्र के आधार पर वेद जैसे अमर ग्रन्थ का निर्धारण करना कहां तक न्यायोचित है? यदि वेदों में काल सूचित करने कराने वाले ज्योतिष सम्बन्धी वर्णन होते तो उसमें विवाह के समय वधू को ,ध्रूव तारा दिखाने का वर्णन होता। दूसरी बात ध्रुव तारा सदा एक स्थान पर स्थित नहीं होता। सन् ईसवी से 28270 वर्ष पूर्व इसके स्थान पर रहा होगा। परन्तु वेदों में इसका भी वर्णन नहीं है। फिर वेद में ज्योतिष कहां से निकाल लाए तिलक, यह समझ से परे है।

आकाश के नक्षत्रों के आधार पर तिलक महोदय वेद का निर्धारण करते हुए कहते हैं–आकाश में जहाँ आकाशगंगा है, वहीं पर श्वान नामक दो तारे हैं। तीसरा नौका, चौथा मृगशीर्ष और पाँचवा नमुचि नामी तारा भी है और वह दृश्य आकाश में बहुत जल्द दिखाई देता है। किसी समय यह वर्षारम्भ पर यह समस्त तारासमूह सूर्य के उदय काल में रहता है और उस समय मृगशीर्ष में वसन्तसम्पात होता था। मान लीजिए तिलक महोदय का यह कहना सही है लेकिन वेदों में इसका वर्णन कहां है? वेदों का अर्थ समझने के लिए सामान्य संस्कृत सहयोगी नहीं है। इसके लिए निरुक्त और वेद–व्याकरण को समझने के अतिरिक्त योगसाधना भी आवश्यक है। वरना वेदों के अर्थ

समझना उतना ही असम्भव है जितना ईश्वर की सत्ता को। सायण, महीधर, ऊवट या विदेशी विद्वानों–मैक्समूलर, कीथ या मैक्डानल्ड की दृष्टि रखकर वेदों को समझना या उसका अर्थ लगाना सम्भव नहीं है। इसलिए तिलक महोदय द्वारा वेदकाल का निर्धारण वेद से करने का प्रयास निरर्थक कहा जा सकता है। तिलक महोदय, वेदों में इतिहास या भूगोल ढूढेंगे तो वहाँ तो ऐसा कुछ नहीं है। हाँ, कल्पना के आधार पर कुछ भी कहा–सुना जा सकता है, जो प्रमाण की कोटि में नहीं माना जा सकता है।

अब तिलक महोदय द्वारा नक्षत्रों का वर्णन वेदों में ढूढने के प्रयास की पड़ताल कर लेते हैं। तिलक कहते हैं कि वदों में आकाशगंगा, नौकापुंज, मृगशिर, नमुचि और श्वान तारों के सम्बन्ध में वर्णन किया गया है। यहाँ देखना यह है कि कौन–सा स्थान मानव की दृष्टि में आता है। हमारी समझ में इसमें आकाशगंगा ही एक स्थान है जिसे सामान्य ढंग से कुछ समझा जा सकता है। अन्य जितने भी स्थान हैं उन्हें सामान्य रूप से समझना कठिन है। ज्योतिष के आधार पर कैसे समझा जा सकता है, इसे भी समझने की आवश्यकता है कि इन्हें सामान्य ढंग से देखा जा सकता है कि नहीं? जो तारे अप्रसिद्ध हैं उनके सम्बन्ध में सामान्यतः कुछ कहना विषय से भटकना है, क्योंकि ये सब अज्ञात हैं। ज्ञात तो मात्र आकाशगंगा है जिसके सम्बन्ध में देशी–विदेशी सभी विद्वान् और अविद्वान् चर्चा करते हैं। लेकिन समस्या यहां तिलक महोदय की यह है कि उन्होंने आकाशगंगा के समय के सम्बन्ध में ऐसी कोई बात नहीं की है जिसपर कुछ ध्यान दिया जाए। हम जानते हैं कि भारतीय, पारसी और ग्रीक भाषाओं में आकाशगंगा का कोई वर्णन नहीं है। जब ऐसी स्पष्ट और वैज्ञानिक बात का कोई वर्णन तिलक जी के मननीय नहीं है तो अप्रसिद्ध तारों के साथ कैसे वसन्तसम्पात आता है?

वेदों के काल निर्धारण में तिलक महोदय अन्य जिन नक्षत्रों की बात करे हैं उनकी समीक्षा कर लेते हैं। नौकातारा का जो वर्णन आता है परन्तु उसके स्थान का सम्बन्ध वसन्तऋतु से हो या उस स्थान पर सूर्योदय होता हो, ऐसा कहीं वर्णन नहीं आता। अब रही बात नमुचि, मृगशीर्ष और श्वान की। नमुचि कोई तारा नहीं है, बल्कि नमुचि नाम बादल का है और इन्द्र नाम सूर्य और विद्युत का है। अमरकोश में इन्द्र को नमुचिसूदन कहा गया है। इसका वर्णन अमरकोश में इस प्रकार किया गया है–सुमात्रा गोत्रभिद्वजी वासतो वृत्रता वृषा। जम्भभेदी हरिहयः स्वराण्नमुचिसूदनः।।(अमरकोश 1/45–46) इस श्लोक से ज्ञात होता है कि नमुचि वे बादल हैं जो प्रहार के बिना नहीं बरसते हैं। हम जानते हैं कि शम्बर बादलों को कहते हैं। इसका वर्णन पंचतंत्र में भी आया है–शम्बरस्य च या माया सा माया नमुचेरपि। (पंचतंत्र मित्रभेद : 194) इस श्लोक में भी नमुचि माया करने वाले बादल ही सिद्ध होते हैं।

अब समझ लेते हैं मृगशीर्ष के सम्बन्ध में। तिलक महोदय ने वेदों के मंत्रों के अर्थ किस तरह और किसके द्वारा समझा, यह तो वहीं जाने, लेकिन उन्होंने जिस उतावलेपन में वेदों में इतिहास खोजने की कोशिश की उससे वे कहीं पहुंचते दिखाई नहीं पड़ते हैं। मृगशीर्ष शब्द से भी वे वेदकाल का निर्धारण करने के लिए जो तर्क दिए वे कहीं से प्रकरण के अनुसार उचित बैठते नहीं हैं। ध्यान देने वाली बात है, मृगशीर्ष शब्द के साथ ऋग्वेद में कहीं सूर्य का नाम नहीं आता , बल्कि मृगशीर्ष शब्द बादलों के लिए ही आता है।

अब आइए समझ लेते हैं 'श्वान' शब्द वेद में किस अर्थ में प्रमुख हुआ है और तिलक महोदय किस अर्थ में करते हैं। ऋग्वेद में 'श्वान' द्विवचन में प्रयुक्त हुआ है। मंत्र इस प्रकार है– यौ ते श्वानौ यमरक्षितारौ चतुरक्षौ पथिरक्षी। (10/14/11) इस मंत्र से ज्ञात होता है कि श्वान दो हैं। परन्तु तिलक श्वान के विषय में जो चार प्रमाण देते हैं वे एक वचनवाला श्वान के अर्थ में हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि एक वचन वाले श्वान का अभिप्राय दूसरा है। यहाँ जिस स्थान पर तिलक महोदय वसन्तसम्पात बतलाना चाहते हैं, उस स्थान के लिए एक वचन श्वान का वर्णन प्रासंगिक नहीं बैठता।

तिलक महोदय वेद के मंत्रों को प्रकरण के अनुसार कितना समझते हैं, उनके एक उदाहरण से समझा जा सकता है। तिलक कहते हैं–ऋग्वेद में सरमा नाम की कुत्ती का वर्णन है। उसे विस्तार करते हुए कहते हैं–एक बार इन्द्र ने सरमा को गायों को ढूँढने के लिए भेजा, किन्तु बीच में पणियों ने उसे जब दूध पिला दिया तब उसने गायों को ढूँढने से मना कर दिया। इन्द्र ने उसे एक लात मारी और उसने यह दूध उगल दिया। यह सरमा वही श्वान तारा है और यह उगला दूध वही आकाशगंगा है'। अब हम इस प्रसंग की समीक्षा कर

लेते हैं। तिलक महोदय कहते हैं कि आकाशगंगा कोई प्राचीन शब्द ही नहीं है, फिर यहां पर आकाशगंगा का प्रकरण कैसे अचानक प्रकट कर दिया। आइए देखते हैं कि ऋग्वेद में इसका किस प्रकरण में प्रयोग किया गया है और यह बादल और सूर्य से किस तरह संदर्भित है? ऋग्वेद (म. 10/108/4) कहता है–हता इन्द्रेण पणयः, अर्थात् पणियों(बादलों) को इन्द्र) सूर्य) ने मारा। अगले मंत्र 9 में सरमा को गायों की स्वसा कहा गया है। इससे ज्ञात होता है कि यह सारा प्रकरण वर्षा ऋतु से सम्बन्धित है। हम जानते हैं वेद में किरणों को 'गौ' कहा गया है। वेद में सूर्य की तीन प्रकार की किरणों का वर्णन किया गया है–आग्नेय, जलीय और आकाशीय। यहाँ सरमा सूर्य की आग्नेय किरण है। गौ जलीय किरण है और पणि बादल हैं। अब इसका प्रकरण के अनुसार दृश्य देखिए। इन्द्र अर्थात् सूर्य ने आग्नेय किरणों से जल वाली किरणों को अपने पास खींचा और बदलों ने फूटकर जल बरसा दिया। यह सारा प्रकरण वृष्टि का है न कि वसन्तसम्पात और श्वान तारे का।

अब एक शब्द शुनासीरौ का है। इस पर एक दृष्टि डाल लेते हैं और देखते हैं इस सम्बन्ध में तिलक महोदय का क्या कहना है। ऋग्वेद का मंत्र है– शुनासीराविमां वाचं जुषेथा यद्दिवि चक्रथुः पयः। तेनेमामुप सिच्चतम्। (ऋ.4/57/5) अर्थात् हे शुनासीरो! मेरी प्रार्थना स्वीकार करके दुग्ध (पय) आप ने द्युलोक में बनाया है, उससे इस धरा को सींचिए। यह सारा सूक्त खेती प्रकरण का है जो खेती की शिक्षा से सम्बन्धित है। यहाँ यह देखना है कि निरुक्तकार शुनासीरौ का क्या अर्थ करते हैं। निरुक्त के अनुसार 'इसका अर्थ हैं–'सूर्य' और 'वायु'। स्पष्ट है सूर्य और वायु से ही वर्षा होती है। तिलक महोदय शुनासीरौ को श्वान तारा बता रहे हैं। वे कहते हैं– 'ऋग्वेद में पृथ्वी पर स्वर्ग से दुग्ध की वृष्टि करने के लिए शुनासीरौ की प्रार्थना की गई है'।' यह न तो मंत्र के प्रकरण से उचित है और न तो निरुक्त के अनुसार ही ठीक है। अथर्ववेद के एक अन्य मंत्र में शुनासीरौ के सम्बन्ध में वर्णन आता है। मंत्र इस प्रकार है–

देवा इमं मधुना संयुतं यवं सरस्वत्यामधि मणावचर्कृषुः।
इन्द्र आसीत् सीरपतिः शत्क्रतुः कीनाशा आसन् मरुत्: सदावनः।। **(अथर्ववेद 6/30/9)**

अर्थात् देवों ने सरस्वती में इस मीठे यव को बोया। शतक्रतुः इन्द्र,सीर के स्वामी हुए और मरुद्गण किसान हुए। यहाँ इन्द्र को सीरपति कहा है और मरुतों को किसान। इससे ज्ञात होता है कि सूर्य और वायु ही शुनासीर हैं। गोपथ ब्राह्मण में भी शुनासीरौ का वर्णन किया गया है। संवत्सर को शुनासीर कहा गया है। गोपथ ब्राह्मण में कहा गया है–जो शुनासीर से यज्ञ करता है, वह इस तेरहवें महीने को प्राप्त होता है। इतना ही संवत्सर है। संवत्सर ही शुनासीर है। हम जानते हैं, संवत्सर वर्षाऋतु में पूर्ण होता है। इसी से इसे वर्ष कहते हैं। वर्षा कराने वाले इन्द्र और वायु हैं, इसलिए इन्हें शुनासीर कहा गया है। निघण्टु में पयः को जल कहा गया है और दिवि शब्द द्यौ का सूचक है। इस प्रकार विवेचन करने से ज्ञात होता है कि शुनासीरी आकाशीय खेती के पदार्थ हैं। इस प्रकार वैदिक शब्दावली अपने विशेष प्रकरण और अर्थ के अनुसार होती है। इसे साधारण संस्कृत के शब्दों से नहीं समझना चाहिए। इस विशेष वैदिक शब्दावली से हम विवेचना करें तो पाते हैं कि श्वान शब्द से उक्त श्वानपुंज का अर्थ नहीं निकलता और न ही वसन्तसम्पात मृगशिरा में सिद्ध होता है। इस तरह हम देखते हैं कि तिलक महोदय द्वारा वेदों से वेदकाल सिद्ध करने का प्रयास किसी भी तरह सफल नहीं होता है।

इस अंक में भारतीय विद्वानों द्वारा वेदकाल के निर्धारण में तिलक महोदय के वेदकाल निर्धारण की विवेचना को वेद और अन्य वैदिक ग्रंथों के अनेक प्रकरणों के साथ समीक्षित करने का एक प्रयास किया गया है। इस विवेचना में यह पाया कि तिलक महोदय ने वेदों के अर्थ और प्रकरण को समझे बिना अपनी मान्यता के अनुसार वेद के मंत्रों से वेदकाल निर्धारण करने का प्रयास किया, लेकिन कहीं भी वे वेद और शास्त्र के अनुसार ठीक नहीं लगते। शेष अगले अंक में।

****

त्वमस्माकं तव स्मसि । (ऋ०७.८१.२१)
प्रभो ! तू हमारा है, हम तेरे हैं ।

VARNAS: PLEASE UNDERSTAND EACH OTHER

– Dr. Roop Chandra 'Deepak'
Lucknow (U.P.)
Mob. 9839181690

India is basically a society having four varnas as four pillars of its building. The varnas are named as Brahmin, Kshatriya, Vaishya and Shudra. It was the top country of the world, all in knowledge, strength and money, and consequently in happiness, when all the four varnas were in their finest form. It is not the case today. Now all the varnas are disturbed, deteriorated and nearly finished, and happiness has also come down and down.

Then or now, the least number of job categories can be four---knowledge, power, money and service. This was the basis of four varnas, their division and working. The system is still working but partially. The varnas should understand each other. A horse can be good or bad on the basis of birth. But a man can't. Man becomes good or bad through education, sanskars and social training.

Brahmin is the first varna. Its name has been derived from Brahm or Veda. Our ancient Brahmins have lived for Vedas. They learnt Vedas. They explained and taught Vedas. Brahmins today, i.e., the men of learning must do the same thing today. They should not put other books as equal to Vedas. They call themselves as Brahmin, Acharya or Pandit. These names are affiliated to Vedas. So, these persons must keep Vedas above all books.

Acharya Shankar has said that the soul is God. So, people of spiritualism and lacs others accept themselves as God. Any sane person can easily understand that no one can be God. God is the creator and sustainer of the entire universe. These people can't do anything of that nature. They know that they are working for bread, begging for money and fighting for property. These are not the characteristics of God. Nevertheless they call themselves as God or part of God.

This is so because Acharya Shankar has said that the soul is God and Acharya Ramanuja has said that the soul is part of God. So the fault lies with these Acharyas. They should not have said and the others should not have accepted this. The men of learning should keep in mind that they are responsible to the Vedas. The Brahmin Varna must follow the Vedas, and must not keep the books like Ramcharitmanas or Gita or any other one as equal to Vedas.

Kshatriya Varna is much organised today in the forms of military, police or other security forces. It should keep in mind that it is responsible to the safety and security of Bharat. The individuals belonging to this Varna should understand that their life

does not belong to themselves. It rather belongs to the nation. If they spare one thing negative, it might cost several lives. A Kshatriya is not for himself. He is for entire Bharat, every moment, at any place and under all circumstances.

Vaishya varna should also understand its basic duty, that is to facilitate the people from whom it is earning its bread. It must not provide adulterated foodgrains or poisoned medicines to its base people. It must not steal taxes from public exchequer. It must display which commodities are made in Bharat and which not. It should be liberal to the labour classes, their families and anxieties.

The labour class, i.e. the fourth varna is generally honest. It sometimes borders with non-working and violence. This generally happens under the influence of communism which has done nothing good to the world. The varna should keep in mind that it constructs the base of the entire society to stand on. No section can perform its duties without its help. Its motto is service, although not without return. It is paid, but service is service, greater than rupees and coins.

All the four varnas must understand their general motto, i.e., the good of entire Bharat. They should also understand the specific mottos of knowledge, security, prosperity and service. Bharat was great. It will be great. It is great if all varnas deliver great. ******

मनुस्मृतिः प्लस–माइनस

• *मनुस्मृति भारत का धर्मशास्त्र है। इसमें 12 अध्याय और 2685 श्लोक हैं। इनमें से 1502 (56%) श्लोक प्रक्षिप्त अर्थात् बाद में मिलाये गये हैं और 1183 (44%) श्लोक मनुकृत अर्थात् मूल या असली हैं।*

• *हठी लोग कहते हैं कि मनुस्मृति में उपस्थित हैं तो 1502 का भी आदर होना चाहिए। यह दृष्टिकोण आर्य विद्वानों का नहीं है; होना भी नहीं चाहिए।*

• *वादी लोग कहते हैं कि 1502 के कारण मनु को दण्ड देना चाहिए। यह दृष्टिकोण आर्य विद्वानों का नहीं है; होना भी नहीं चाहिए।*

• *न्यायोचित पक्ष यह होगा कि 1502 को हटा दो और 1183 को अपना लो।*

• *असली मनुस्मृति में जो है वह अन्यत्र कहीं नहीं है।*

• *1183 श्लोकों में भरपूर अमृत है; उदाहरणार्थ ३ श्लोक प्रस्तुत हैं –*

१. सत्यं ब्रूयात्प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात्सत्यमप्रियम्।
प्रियं च नानृतं ब्रूयादेष धर्मः सनातनः।।(४–१३८)
(सदा सत्य एवं प्रिय बोले; अप्रिय सत्य न बोले; असत्य प्रिय कभी न बोले; यही सनातन धर्म है।)

२. सन्तुष्टो भार्यया भर्त्ता भर्त्रा भार्या तथैव च।
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवम्।।(३–६०)
(जिस कुल में पत्नी से पति और पति से पत्नी प्रसन्न रहती है, उसी कुल में नित्य भला होता है; नहीं तो नहीं।)

३. धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।(६–९२)
(धर्म के दस लक्षण हैं–कभी न टूटने वाला धैर्य, क्षमाभाव, मन का संयम, अस्तेय, तन–मन की शुचिता, इन्द्रियजय, सद् बुद्धि, विद्या, सत्य और अक्रोध।)

– आचार्य रूपचन्द्र 'दीपक'

UNDERSTANDING HINDUISM

– Dr. Sitesh Alok

What is Hinduism? This question piques not only the inquisitive non-Hindus but also torments many Hindus themselves. Perhaps, this is because Hinduism is a concept much too subtle to put into a framework of words, especially when viewed in the context of the existing religions of the world.

At the very outset what needs to be understood is that the word 'Hindu' was unwittingly coined around the seventh century by the Arabs who pronounced Sindhu, i.e. the river flowing near the western border of erstwhile India, as 'Hindu', because of their own enunciation, which caused *'Sa'* to be pronounced as *'Ha'*. It was they who started calling all people settled beyond the eastern side of the river Sindhu, as Hindus.

Gradually, especially after the advent of Islam and the invasion of Mohammad Bin Qasim in 712 A.D. to make in-roads into this hitherto sequestered and unexplored territory, the term 'Hindu' got wider acceptance, unwittingly though, even by the populace here, who lived scattered over this sub-continent. Though politically independent to follow their respective regional customs and rituals, and invocation of local deities, they had a common bond of culture and a code of conduct, they called Dharma.

Hinduism is, thus, a collective nomenclature for umpteen uncoded religions practiced in the Indian sub–continent, referred to as a commonwealth of religions by some. Maybe, in a strict sense, these belief systems are not religions because there is no interdiction with regard to worshipping any deity other than their own – nor any obligation to follow a particular set of rituals or worship their specified deity.

Dharma and the Religions :

How strange! Inconceivable! Isn't it? This is something radically different and inconceivable when viewed through the eyes of most people residing in other parts of the world and who have come to accept one of the codified religions – willingly or under compulsion – particularly Christianity and Islam, which together have nearly three-fourths of the world population under their fold. Definitions apart, broadly speaking, while the modern religions, referred to as semitic religions, lay emphasis on the name of their Almighty, the method of praying Him and their rites and rituals, Hinduism is liberal in all these respects, and lays sole emphasis on people's moral

and ethical conduct for universal well-being, by following the path of *Dharma*.

And that is what makes Hinduism so unique – and different from the religions. While Hindus, too, believe in one Almighty, who exists everywhere and in everything, people are free to call Him by any name and worship Him in any form and manner they like. In most accepted Hindu scriptures, the Almighty has been perceived in three major roles, viz. as the Creator, as the Saviour during lifetime and the Controller and Master of life after physical death (often, mistakenly, referred to as the destroyer).

And that is how Hinduism is not a narrow religion. It is a concept much too sublime and humane. This is something basic or most fundamental to understand that Hinduism is not something akin to, or comparable with, the semitic religions practiced in most parts of the world. The grave misunderstanding emerged when, in an attempt to translate *Dharma* into English, or to find some synonymous expression for it in the non–Indic languages, modern politicians and scholars ended up with the word 'religion' they knew. They, in fact, failed to comprehend the unique concept of *Dharma* which the ancient habitants of this subcontinent had evolved.

While religions are systems of faith and worship, *Dharma* is an enlightened way of life. Cutting across all religions, *Dharma* lays emphasis on people's moral and ethical conduct for a happy universal co-existence. With no compulsions whatsoever, *Dharma* elucidates and imparts the basic noble attributes like patience, forgiveness, non-stealing, purity of thought, speech and action, intellect, education, truth and control over one's, temper and senses. *Dharma* beckons us to imbibe such noble attributes – as many of them and in the measure and extent possible. The only requirement is just that one should be a good human being. These human values are, generally speaking, eternal, i.e. valid for all times. That is why Hinduism is often referred to as *Sanatan* (i.e. eternal) *Dharma*.

That is why one can be a Hindu whether one worships Shiva, Vishnu or Rama or Krishna, Or Mahavir, or Buddha, or Durga, or even Christ or Mohammad, or none at all. One is free to worship Him in the form of some idol, a mountain, a stone or some other object, or in an abstract formless thought. One is free to wear a *dhoti* or a *Kafni* or a *Kimono* or a gown or nothing at all. One is free to apply sandal-paste on the forehead or a *tilak* or nothing at all. One is free to wear one's hair in the style one wants, and to sport a beard of one's choice, or to stay clean–shaven.

Proselytization & Never Thought of :

That is why Hinduism was never preached or canvassed, let alone forced upon anyone. That is why there was no provision to proselytize others to

Hinduism. It was believed that one is fine, wherever and in whichever family Almighty placed one in. One should strive to be a good human being and free to follow the system of faith and worship of one's roots. Theoretically, according to the concept of Hinduism, a good human being is fine whether he follows Islamic system of faith and worship, or the Christian tradition or any other belief system. Why incite or induce anyone to follow the Hindu tradition? If one is a good human being, one is arguably already a Hindu, irrespective of the customs and rituals he or she follows. And if not a good human being, his taking up of the Hindu garb will not benefit anyone.

Broadly speaking, all religions were 'formed' at, or around, some point of time, by someone or some group of people. By and large, all religions have codified rules and rituals and any change in them is simply forbidden, even if changing times call for it. Any change in them is verboten and is considered blasphemy. Hinduism, by contrast, emphasises human edification and advocates control and mastery over natural human weaknesses – such as lust, anger, greed, laziness and impatience – and is open to changes, in human interest, if changed time so warrants. For instance, in the very early times, when cereals were not known, people depended on animal meat for food, and non-vegetarian diet was totally accepted in Hinduism. But, with the growth of civilization and the cultivation of grains, the norm gradually shifted to vegetarianism and the associated concept of *Ahinsa*, i.e. no killing, and the idea that no animal should be killed even for food, gained acceptance as part of *Dharma*.

That is why, Hinduism has no problem with the religions of the world, whether semitic or Indic. Hinduism, broadly speaking, looks upon all human beings as *Dharmi* or *Adharmi*, i.e. those who follow the accepted moral and ethical tenets and those who do not adhere to them. The society would respect the people who follow the path of *Dharma*, in accordance with the degree they are true to *Dharma*, and would frown upon, or condemn, those who act in contravention of the path of *Dharma*. Broadly, that would indicate how good, or not so good, or not good they are. For example, Ravan and Kans of the ancient times, though born as Hindus, even though the term Hindu was not known in those times, were condemned as *Adharmi* on account of their unethical and immoral conduct. Similarly, Jaichand of the medieval era and some present–day villains like food adulterators or traitors, even though Hindus by birth, ritual and behaviour, would be called *Adharmi* and recommended for suitable punishment by the authority. Hinduism is, thus, for constant introspection and scrutiny aimed

at improvement in ethical and moral values with a view to guiding human behaviour for social harmony.

Modern Hindus :

True, the conduct of most Hindus, today, does not conform to the lofty ideals advocated by *Dharma*. Most critics of Hinduism dwell upon this disparity. No doubt there is a marked divergence between the accepted principles of Hinduism and the social conduct of even some of its ardent followers. The reason precisely lies in the fact that most Hindus themselves do not know what Hinduism stands for? What does it signify? How are Hindus different from others and they would remain different from others?

This is unfortunate. But this is because, over a long time, especially during the centuries of slavery, Hindus were not allowed to know who and what they are. Not only was their age–old system of knowledge, of the basic dos and don'ts, ruthlessly erased, they were also deprived of their heritage, their self-respect and self-confidence at one go. They were led to a state of utter confusion, ignorance and abasement. Yes, this is the result of slavery. This is precisely what foreign rule strives to create and thrive upon.

The Ancient System :

The traditional system of Hindus for spreading knowledge in the society and preparing the young generations to face the challenges of life in an honourable manner was through *Gurukul*s, i.e. teacher-based academies of a kind, where a learned scholar, i.e. the head of that academy called *Guru*, imparted knowledge of both a scriptural and practical nature to the citizens of the future. This was sort of voluntary arrangement, i.e. not appointed or set up by the state, and the teachers did not demand any fee either. Nor did they get any salary from any source for the service they rendered. It was for the pupils to collect money or material from the society, day after day, call it by way of collecting alms, and contribute towards the needs of the *Guru'*s *ashram.* This was how the society took care of the needs of the teacher to enable him concentrate on acquisition of knowledge from the scriptures, meditation and by way of exchange of views with other learned people.

With the advent of foreign rule, the ruthless destruction of our scriptures and the suppression of our people started and, as a consequence, the *Gurukul*s got demolished. On the one hand, the *Gurus* were thrashed and thrown out for spreading knowledge blasphemous in their concept, and, on the other hand, the society was lead to a state of penury in which no thought could be given to children's education let alone to supporting the clan of teachers. The age-old and time-tested system of acquiring and disseminating knowledge in the soci--ety thus crumbled altogether.

After about six centuries of Islamic rule, came the British rule. Though different in shades and manners, the oppression continued to confuse, demoralize and humiliate people and further disintegrate the society. The new rulers furthered the process of depriving people of their self-confidence and self-respect with yet another tool – that of a new language. A new class of *Babu*s with workable knowledge of English was created. They were rewarded by the rulers with small jobs which provided them with a comfortable living and social status. These *Babu*s looked down upon their deprived fellow beings and, in turn, were respected by them for the powers and life-style they enjoyed.

This unfortunately, was not the end of it. Towards the fag end of British rule in India, Marxism with its sole emphasis on class-conflict and the slogan of assured monetary gains was taking roots in India. Money sounded important and attractive to the suffering and hopeless masses. But the Marxian approach flouted the basic emphasis on moral values of the Hindu ethos. Yet another crack thus appeared in the already battered Hindu society

Marx, like most others, had little knowledge of Hinduism and its emphasis on ethical values. A protagonist of secular thought based purely on material well-being, he unwittingly created a new form of 'religion'. Its followers took him as their supreme being and set out to propagate his word with utmost religiosity, more severely in India, probably because of the people's ignorance of their own roots and the rich cultural ethos.

Was It Weak Defence?

A valid question is often raised against Hindus: Why were they so weak that they could not defend themselves against foreign invasion and the subsequent downfall of their culture. This is no doubt, a fact of history that Hindus could not defend themselves against the invaders. There is no denying they were militarily weak. This irrefutable fact, unfortunately, has another historical backdrop worth mentioning.

In India, five hundred years before the birth of Christ, Gautam Buddha and saint Mahaveer were born. They both unequivocally emphasized the doctrine of *Ahinsa*, i.e. no killing of any sort. As a consequence, even kings and emperors literally bade farewell to arms. All military preparations came to a halt. Production of arms and ammunition completely stopped – and the personal swords, daggers, etc. owned by people started gathering rust, because of non-use and neglect, so much so that even an accidental jingling of metal pieces in homes came to be considered an ill–omen. Social leaders kept preaching higher human values and the virtues of tolerance, forgiveness, universal brotherhood and peace.

Those were the times when in several neighboring countries people were raising armies and heading towards new lands for personal laurels, riches and women. They were also experimenting with & new and more effective weapons.

This is also a fact of history that whenever foreigners came, particularly from the west, to settle down in this country they were welcomed and granted complete freedom to follow their respective rites and rituals. The settlement of Parsees in Gujarat, in the tenth century, and that of Syrian Christians in Kerala, in 57 AD, and the Jews in the Konkan region of Maharashtra after their persecution by the Romans around a century BC, are cases in example.

Also, around the very same time, Hindus were attacked by several foreign organized marauders, like Taimur the lame and Ghengis Khan, who looted the people and returned to their respective countries. But, unfortunately these attacks did not serve as an eye-opener and whatever wealth people lost was taken by Hindus just as some stroke of ill-luck, or divine punishment for some past sin. Hindus, probably, forgave all enemies and continued to harp on finer human values.

Soon afterwards, there started a regular series of large-scale invasions from the northwest from people who wanted much greatly impressed by the availability of in water here, and had plans to settle down this country to rule the local people and to eventually convert them to their own new-found faith.

Mohammad Gouri's invasion, in 1192, is yet another fact of history, wherein he was defeated by the valiant Rajput fighters. But their king Prithviraj Chauhan, foolishly enough, pardoned him. Much humiliated, Gauri left only to return with a massive army and much better preparation. And, defeating Prithviraj Chauhan, Gouri gouged his eyes straightaway, and killed him eventually.

Babur had written in his autobiography, *Babarnama,* that individually Hindu fighters were brave and fought valiantly, but they could not fight as an army. Their armies had no plan and no strategy because fighting-skill requires regular practice and the temperament to kill. History also tells us while Babar attacked with his in-practice army – equipped with the newly invented gun-powder, Hindus just had their rusted swords to defend themselves.

Hindus, thus, did not lose because of their weakness or incompetent socio-political system but because of their excessive idealism. At a time when the so called civilizations all around were acquiring military powers, India was wholly lost in some reverie of idealism – something that Tibet did centuries later, more than riches. They were, in addition, until it was brutally wiped out by China.

Pages of history can never be reopened and re-written. Likewise, any self defence after the downfall cannot change the facts of history. But what needs to be understood is that any adverse and malicious criticism of our own people in this regard should not be allowed to take the better of our self-confidence and faith in our well-meaning heritage.

(We do not agree with all the facts of the author like the name Hindu originated from the river Sindhu but still so many facts are true in the article that's why we publishing it in Aarsh Kranti. The author himself responsible for his article not Editor.)

– Co-editor

मूर्खता अथवा षडयन्त्र ?

– 'आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक'

आजकल तिल का तेल निकालने हेतु बैल के स्थान पर मोटरसाईकिल के प्रयोग को कानूनसम्मत एवं अहिंसक बताया जा रहा है। यह हमारे अभागे देश के कानून और कानूनवेत्ताओं की मूर्खता का परिचायक है। जब कोल्हू, हल एवं बैलगाड़ी में बैलों का उपयोग करना बन्द हो जायेगा, तब क्या बैलों को कानून के रखवाले पालेंगे अथवा वे बैल सड़कों, गलियों वा खेतों में भूखे-प्यासे भटकने को विवश होंगे? जो सभी जगह लाठियां खाते घायल होते रहेंगे। तब कसाई लोग ऐसे बैलों को बूचड़खानों में ले जायेंगे, जहाँ उनका निर्मम वध होगा। उन कसाइयों को सरकार अनुदान देगी, ताकि वे अधिक से अधिक पशुओं को मार कर मांस उत्पादन कर सकें। आश्चर्य है कि किसान अथवा मजदूर बैल आदि पशु से काम ले, तो पशुक्रूरता निवारण अधिनियम आकर उसे रोकता है और जब बड़े-बड़े अरबपति कसाई बूचड़खाने में एक-एक दिन में लाखों पशुओं का खून बहाएं, तो उन्हें अनुदान मिले और पशुक्रूरता निवारण हेतु बनाया कानून कोई काम न आए। यह क्या बुद्धिमानों का कानून हो सकता है? क्या किसान व मजदूर के विनाश तथा कसाइयों के उत्कर्ष के लिए यह कानून नहीं है? अथवा क्या कसाइयों एवं पैट्रोलियम कम्पनीज् की मिलीभगत से देश के किसानों व मजदूर के समूल विनाश का यह घातक षडयन्त्र तो नहीं है? यहाँ कोई पर्यावरणवादी भी नहीं बोलता है। आजकल कुछ पर्यावरणवादियों को पशु भी पर्यावरण के लिए हानिकारक दिखाई देते हैं। सर्वत्र वेद, गौ एवं ऋषियों की सभ्यता व संस्कृति के विनाश का षडयन्त्र चल रहा है, जिसे हमारे राष्ट्रवादी शासक भी नहीं समझा पा रहे है। जब पैट्रोलियम समाप्त हो जायेगा और बैल भी समाप्त हो जायेंगे, तब यह मानव स्वयं भूखा-प्यासा मर जायेगा। संसार के कृषि वैज्ञानिको! मैं आपको सचेत कर रहा है कि ट्रैक्टर आदि यन्त्रों पर आधारित कृषि एवं बीजों से छेड़छाड़ अन्ततः भूमि की उर्वरा शक्ति को नष्ट कर देगी, पर्यावरण को नष्ट-भ्रष्ट कर देगी, तब आपको मेरी चेतावनी अवश्य याद आयेगी परन्तु तब तक बहुत देर हो जायेगी? मैं मानवता वा राष्ट्रवाद के ध्वजवाहकों को भी चेतावनी दे रहा हूँ कि यदि गौ आदि पशुओं व भूमि की उर्वरा शक्ति को न बचाया गया, तो राष्ट्र व मानवता दोनों में से कोई भी नहीं बचेगा। वस्तुतः वेदविद्या बिना विपरीत बुद्धि होकर यह मानव जाति विनाश के पथ पर अग्रसर है।

पेरियार द्वारा ईश्वर पर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर

1. क्या तुम कायर हो जो हमेशा छिपे रहते हो, कभी किसी के सामने नहीं आते ?

उत्तर – ईश्वर कायर नहीं है, निराकार होने की वजह से वो सामने नहीं आ सकता। उसको निराकार होना इसलिए जरुरी है ताकि वो ब्रह्माण्ड को यथावत चला सके, अगर वो साकार हुआ तो एकदेशीय हो जाएगा, इससे विज्ञान का नियम टूट जाएगा, और ईश्वर कभी अपने नियमों को नहीं तोड़ता। विज्ञान का एक नियम है, जहाँ क्रिया होती है, वहीं क्रिया को करने वाला कर्ता उपलब्ध होता है, इसलिए ब्रह्माण्ड में क्रिया हो रही है। कण–कण में चूंकि ब्रह्माण्ड अनंत है, इसलिए ईश्वर को सर्वव्यापक होना पड़ेगा, और सर्वव्यापक होने के लिए निराकार होना पड़ेगा, क्यूंकि केवल निराकार ही सर्वव्यापक हो सकता है। प्रश्न ये भी उठता है कि ईश्वर आये क्यों सामने, प्रायः लोग पूछते हैं कि ईश्वर की क्या आवश्यकता है, तो उत्तर ये भी होगा की कोई आवश्यकता नहीं जब तक मनुष्य आलसी बैठा है। ईश्वर को सामने आने की कोई आवश्यकता नहीं। ईश्वर ने मनुष्य को पुरुषार्थ करने के लिए उसे वेद ज्ञान समाज द्वारा दिया है, मनुष्य को ईश्वर के भरोसे न बैठकर पुरुषार्थ करना चाहिए।

2. क्या तुम खुशामद परस्त हो जो लोगों से दिन रात पूजा, अर्चना करवाते हो?

उत्तर – ईश्वर ने कहीं वेदों में यह ज्ञान नहीं दिया कि– तुम मेरी पूजा अर्चना करो, हाँ, लेकिन उपासना करने के लिए जरूर कहा है। उपासना ईश्वर की ऐसी होती है, जिससे मनुष्य को ही लाभ पहुँचता है, ईश्वर को लाभ की कोई इच्छा नहीं होती। अब उपासना है क्या? उस उपासना का नाम है **अष्टांग योग** – अष्टांग योग (आठ अंगों वाला योग), को आठ अलग–अलग चरणों वाला मार्ग नहीं समझना चाहिए। यह आठ आयामों वाला मार्ग है जिसमें आठों आयामों का अभ्यास एक साथ किया जाता है। योग के ये आठ अंग हैं :

१) यम, २) नियम, ३) आसन, ४) प्राणायाम, ५) प्रत्याहार, ६) धारणा ७) ध्यान ८) समाधि

यमः–

(क) **अहिंसा** – शब्दों से, विचारों से और कर्मों से किसी को अकारण हानि नहीं पहुँचाना।

(ख) **सत्य** – विचारों में सत्यता, परम–सत्य में स्थित रहना, जैसा विचार मन में है वैसी ही प्रामाणिक बातें वाणी से बोलना।

(ग) **अस्तेय** – चोर–प्रवृति का न होना।

(घ) **ब्रह्मचर्य** – दो अर्थ हैं:

(i) चेतना को ब्रह्म के ज्ञान में स्थिर करना।

(ii) सभी इन्द्रिय–जनित सुखों में संयम बरतना।

(च) **अपरिग्रह** – आवश्यकता से अधिक संचय नहीं करना और दूसरों की वस्तुओं की इच्छा नहीं करना।

नियमः–

(क) **शौच** – शरीर और मन की शुद्धि

(ख) **संतोष** – संतुष्ट और प्रसन्न रहना

(ग) **तप** – स्वयं से अनुशासित रहना

(घ) **स्वाध्याय** – आत्मचिंतन करना

(च) **ईश्वर–प्रणिधान** – ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण, पूर्ण श्रद्धा होनी चाहिए।

आसन :– आसन से तात्पर्य है स्थिर और सुख देनेवाले बैठने के प्रकार (स्थिर सुखमासनम्) जो देहस्थिरता की साधना है।

प्राणायाम :– आसन जप होने पर श्वास–प्रश्वास की गति के विच्छेद का नाम प्राणायाम है। बाहरी वायु का लेना श्वास और भीतरी वायु का बाहर निकालना प्रश्वास कहलाता है। प्राणायाम प्राणस्थैर्य की साधना है। इसके अभ्यास से प्राण में स्थिरता आती है और साधक अपने मन की स्थिरता के लिए अग्रसर होता है। अंतिम तीनों अंग मनःस्थैर्य के साधन है।

प्रत्याहार :– प्राणस्थैर्य और मनःस्थैर्य की मध्यवर्ती साधना का नाम 'प्रत्याहार' है। प्राणायाम द्वारा प्राण के अपेक्षाकृत शांत होने पर मन का बहिर्मुख भाव स्वभावतः कम हो जाता है। फल यह होता है कि इंद्रियाँ अपनी बाहरी विषयों से हटकर अंतर्मुखी हो जाती है।

इसी का नाम प्रत्याहार है (प्रति=प्रतिकूल, आहार=वृत्ति)।
धारणाः– एकाग्रचित्त होना अपने मन को वश में करना।
ध्यानः– धारणा निरंतरता ही ध्यान है ।
समाधिः– आत्मा से जुड़ना शब्दों से परे परम–चैतन्य की अवस्था। हम सभी समाधि का अनुभव करें।
ऐसे ईश्वर की उपासना होती है, ईश्वर की कोई मूर्ति नहीं कि उसकी पूजा की जाये। और जिसकी मंदिरों में पूजा की जाती है, वह ईश्वर नहीं, अपितु कोई महापुरुष होता हैं।

न तस्य प्रतिमास्ति यस्य नाम महद्यशः।

(यजुर्वेद ३२/३)

अर्थ – उस ईश्वर की कोई प्रतिमा नहीं, जिसका महान् यश है।

3. क्या तुम हमेशा भूखे रहते हो जो लोगों से मिठाई, दूध, घी आदि लेते रहते हो ?

उत्तर – ईश्वर का कोई शरीर नहीं , इसलिए भूखा रह ही नहीं सकता वो, उसको कभी भूख नहीं लगती, हाँ परन्तु अज्ञानता वश लोग मूर्तियों के सामने दूध, घी आदि चढाते हैं, यह मनुष्यों की गलती है, इस गलती को उस महापुरुष जिसकी मूर्ति बनी है और ईश्वर पे थोपना नहीं चाहिए।

4. क्या तुम मांसाहारी हो जो लोगों से निर्बल पशुओं की बलि मांगते हो?

उत्तर – ईश्वर ने तो कभी वेदों में बलि या मांस खाने का आदेश नहीं दिया है, आप एक भी मंत्र दिखाएँ और मैंने यह भी कह दिया था कि, यह मनुष्यों कि गलती है कि वह ईश्वर के नाम पे बलि आदि करते हैं, लेकिन ईश्वर का इसमें कोई योगदान नहीं ।

यजुर्वेद के 40/7 मन्त्र **'यस्मिन्त्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद् विजानतः। तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुपश्यतः'** में कहा गया है कि जो व्यक्ति सम्पूर्ण प्राणियों को केवल अपने जैसी आत्मा के रूप में ही देखता है (स्त्री, पुरुष, बच्चे, गौ, हिरण, मोर, चीते तथा सांप आदि के रूप में नहीं) उसे उनको देखने पर मोह अथवा शोक (ग्लानि वा घृणा) नहीं होता, क्योंकि उन सब प्राणियों के साथ वह एकत्व (समानता तथा साम्यता) का अनुभव करता है। इस मन्त्र में यह सन्देश दिया गया है कि शोक व मोह से बचने के लिए मनुष्य को सभी प्राणियों को अपनी आत्मा के समान व रूप में ही देखना चाहिये। इससे वह शोक व मोह से बच सकता हैं।

यजुर्वेद मन्त्र 36/18 में कहा गया है कि **'मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।'** इस मन्त्र का अभिप्राय है कि मुझे सब प्राणी अपना मित्र समझें तथा मैं भी उनको मित्रदृष्टि से देखूं। हे परमात्मा! कुछ ऐसी विधि मिलाओं कि हम सब प्राणी एक दूसरे से सच्चे मित्रों जैसा व्यवहार करें।

प्राणीमात्र के लिये अथाह मैत्री के इस वैदिक सिद्धान्त का पारिणाम यह निकला कि समाज में दोपायों (मनुष्यों) और चौपायों की हिंसा पूर्ण रूपेण निषिद्ध कर दी गई। यजुर्वेद मानव के प्रति अहिंसाभाव का कठोर आदेश देते हुए कहता है कि **'मा हिंसीः पुरुषम्'** (यजुर्वेद 16/3) अर्थात् पुरुष की हिंसा मत करो। यजुर्वेद पशुओं के मारे जाने पर कठोर प्रतिबन्ध लगाता है। वह कहता है कि **'मा हिंसीस्तन्वा प्रजाः'** (यजुर्वेद मन्त्र 12/32) तथा **'इमं मा हिंसीद्विपाद पशुम्'** (यजुर्वेद 13/47)। इसी प्रकार यजुर्वेद में गोवध का निषेध किया गया है क्योंकि मानव जाति के लिये गौ शक्तिवर्धक घी प्रदान करती है। **'गां मा हिंसीरदितिं विराजम्'** (यजुर्वेद 13/43 एवं **'घृतं दुहानामीदतिम् जनाय... मा हिंसीः'**। (यजुर्वेद 13/49)। इसी प्रकार से अश्व, बकरी व भेड़ आदि पशुओं का वध न करने के प्रति भी वेद में अनेक आज्ञायें उपलब्ध हैं। इससे सिद्ध हो जाता है कि समस्त वैदिक साहित्य के प्रतिनिधि वेद पशुओं की हिंसा के सर्वथा विरोधी हैं, मांसाहार का तो प्रश्न ही नहीं होता।

तो यह बात कहाँ से आगई कि ईश्वर बलि देने को कहते हैं ? जबकि ईश्वर ने वेदों में प्राणिमात्र को अपना समझने को कहा है। लोग बलि आदि ईश्वर के नाम पे इसलिए देते हैं, क्यूंकि उन्होंने वेद नहीं पढ़े ।

5. क्या तुम सोने के व्यापारी हो जो मंदिरों में लाखों टन सोना दबाये बैठे हो?

उत्तर – अब मंदिर की मूर्ति में प्राण तो होता नहीं कि, वह मूर्ति किसी से पैसा मंगवाए, और ईश्वर तो सर्वव्यापक है, उसको किस चीज की कमी है, समस्त ब्रह्माण्ड उसका है। ये उन ढोंगी मनुष्यों का किया धरा है जो मंदिरों में लाखो टन पैसा रखते हैं, यह उस मूर्ति और ईश्वर का किया धारा नहीं।

6. क्या तुम व्यभिचारी हो जो मंदिरों में देवदासियां रखते हो ?

उत्तर – ऊपर का ही उत्तर है यहाँ पे भी कि मूर्ति और ईश्वर का कोई योगदान नहीं मंदिर में देवदासियाँ रखने में, यह सब धूर्तो का किया धरा है।

7. क्या तुम कमजोर हो जो हर रोज होने वाले बलात्कारों को नहीं रोक पाते?

उत्तर – ईश्वर ने मनुष्य को कर्म करने में स्वतंत्र छोड़ा है, ईश्वर कभी किसी मनुष्य के कर्मो में बाधा नही डालता। अगर ऐसा किया तो उसका यह नियम टूट जाएगा कि मनुष्य स्वतंत्र हैं कर्म करने के लिए। उसने मनुष्यों को कर्म करने के लिए इसलिए स्वतंत्र छोड़ा है ताकि वो अपने पूर्व जन्मों के कर्मो का फल भोग सकें। अगर मनुष्य स्वतंत्र नहीं रहेगा अर्थात् वह ईश्वर के बंधन में रहेगा, अर्थात् वह कर्म भी अपने अनुकूल नहीं कर सकता तो कर्म का फल कैसा? इस हिसाब से तो फल मिलना ही नहीं चाहिए। जबकि हर क्रिया की प्रतिक्रिया होती है। इसलिए कर्मफल सिद्धांत सत्य है। इससे यह भी प्रमाणित होता है कि मनुष्य कर्म करने में स्वतंत्र है, लेकिन ईश्वर सब कर्मों का फल यथावत देता है। जो जैसा करेगा उसको वैसा फल मिलेगा ।

8. क्या तुम मूर्ख हो जो विश्व के देशों में गरीबी–भुखमरी होते हुए भी अरबों रुपयों का अन्न, दूध,घी, तेल बिना खाए ही नदी नालों में बहा देते हो?

उत्तर – इसका उत्तर भी मैंने ऊपर दे दिया है कि यह मनुष्यों का किया धारा है ईश्वर का नहीं ।

9. क्या तुम बहरे हो जो बेवजह मरते हुए आदमी, बलात्कार होती हुयी मासूमों की आवाज नहीं सुन पाते?

उत्तर – इसका उत्तर ऊपर उत्तर 7 में दिया गया है।

10. क्या तुम अंधे हो जो रोज अपराध होते हुए नहीं देख पाते?

उत्तर – इसका भी उत्तर 7 ही होगा।

11. क्या तुम आतंकवादियों से मिले हुए हो जो रोज धर्म के नाम पर लाखों लोगों को मरवाते रहते हो?

उत्तर – इसका भी उत्तर 7 ही होगा।

12. क्या तुम आतंकवादी हो जो ये चाहते हो कि लोग तुमसे डरकर रहें?

उत्तर – हम अपने पिता से भी तो डर कर रहते हैं कि हम कोई गलत कार्य न करें जिससे हमारे पिता को गुस्सा आये। उसी तरह ईश्वर से भी गलत कार्य करते समय डरना चाहिए क्यूंकि वह सर्वव्यापक होते हुए सब देख रहा है। ईश्वर उतना भी डरावना नहीं कि वह आतंकवादी हो। ईश्वर तो सबका मित्र, हितैषी है। इसके लिए आप वेद पढ़ें, और तर्क से ईश्वर को समझें।

13. क्या तुम गूंगे हो जो एक शब्द नहीं बोल पाते लेकिन करोड़ों लोग तुमसे लाखों सवाल पूछते हैं?

उत्तर – करोडों लोग किसके सामने प्रश्न पूछते हैं ? मूर्ति के सामने या ईश्वर से ? इस समय तो कुछ को छोड़ कर ईश्वर के वास्तविक स्वरूप को कोई जनता ही नहीं, ईश्वर से प्रश्न कैसे करना है वह जनता ही नहीं। इसका उत्तर अष्टांग योग वाले उत्तर में है, कोई मनुष्य कैसे ईश्वर से ज्ञान प्राप्त कर सकता है।

14. क्या तुम भ्रष्टाचारी हो जो गरीबों को कभी कुछ नहीं देते जबकि गरीब पशुवत काम करके कमाये गये पैसे का कतरा2 तुम्हारे ऊपर न्यौछावर कर देते हैं?

उत्तर – इसका भी उत्तर 7 ही होगा। ईश्वर ने मनुष्य को पुरुषार्थ करने के लिए कहा है। हमारे दायें हाथ में पुरुषार्थ हो और बायें में विजय हो। (अथर्व० ७। ५८।८) तुम्हारा सत्य और असत्य का विवेचन पक्षपात रहित हो, किसी एक ही समुदाय के लिए न हो। तुम संगठित होकर स्वास्थ्य, विद्या और समृद्धि को बढ़ाने में सभी की मदद करो। तुम्हारे मन विरोध रहित हों और सभी की प्रसन्नता और उन्नति में तुम अपनी स्वयं की प्रसन्नता और उन्नति समझो। सच्चे सुख की बढती के लिए तुम पुरुषार्थ करो। तुम सब मिलकर सत्य की खोज करो और असत्य को मिटाओ। (ऋग्वेद १०.१६१.३)

15. क्या तुम मुर्ख हो कि हम जैसे नास्तिकों को पैदा किया जो तुम्हे खरी खोटी सुनाते रहते हैं और तुम्हारे अस्तित्व को ही नकारते हैं?

उत्तर – ईश्वर ने कभी न आस्तिक को पैदा किया न नास्तिक को। ईश्वर ने केवल मनुष्य कि उत्पत्ति की। एक बालक भी जब जन्म लेता है तो वह न आस्तिक होता है न नास्तिक। नास्तिक उसको कहते हैं जो वेद को न माने, ईश्वर को न माने, बुरे कर्म करे। इससे विपरीत आस्तिक होता है। मैंने पहले ही बता दिया था कि मनुष्य कर्म करने में स्वतंत्र है, मनुष्य स्वयं निर्धारित करता जाय कि उसे नास्तिक बनना है या आस्तिक।

आर्य आक्रमण सिद्धांत : वक्त के साथ गिरती झूठ की दीवार

– हृदयनारायण दीक्षित
उत्तर प्रदेश. विधानसभा

असत्य की उम्र नहीं होती, लेकिन प्रायोजित झूठ की बात दूसरी है। यह प्रायोजकों के बुद्धि कौशल से चर्चा में बना रहता है। राष्ट्रीय अपमानजनक सत्य शूल की तरह हृदय में चुभते हैं। आर्य हमारे पूर्वज हैं। वे वैदिक संस्कृति, सभ्यता और दर्शन के जन्मदाता हैं। दुनिया के प्राचीनतम ज्ञानकोश ऋग्वेद के द्रष्टा रचयिता हैं बावजूद इसके उन्हें विदेशी हमलावर बताया–पढ़ाया जाता है। डॉ. अम्बेडकर ने **'Who were the Shudras'** लिखकर आर्यों के विदेशी होने का सिद्धांत गलत ठहराया। मार्क्सवादी चिंतक डॉ. रामविलास शर्मा और संस्कृति दर्शन के विद्वान् डॉ.भगवान सिंह आदि ने भी इस झूठ का पर्दाफाश किया था, लेकिन राष्ट्रीय स्वाभिमान को अपमानित करने की योजना से आर्य आक्रमण का महाझूठ अब भी जारी है।

राखीगढ़ी–हरियाणा और ग्राम सिनौली जिला बागपत उत्तर प्रदेश से शुभ सूचनाएं आई हैं। सिनौली में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण ने खुदाई में ईसा पूर्व 2000–1800 के समय का ताम्र मूर्तियों से सजा रथ, कटार और तलवार के साथ आभूषण भी मिले हैं। वहीं राखीगढ़ी में 5000 वर्ष पुराने नरकंकाल के डीएनए परीक्षण ने चौंकाया है। दोनों ने भारतीय सभ्यता की प्राचीनता और निरंतरता को सही ठहराया है। भारत प्राचीन सभ्यता है। दोनों अध्ययनों ने प्राचीन ऋग्वैदिक सभ्यता को देशी पाया है। डेकन कॉलेज पुणे के कुलपति बसंत शिंदे व बीरबल साहनी प्रयोगशाला लखनऊ के प्रमुख नीरज के नेतृत्व में हुए डीएनए विश्लेषण के अनुसार शव संस्कार की पद्धति ऋग्वैदिक काल से मिलती जुलती है। कंकाल परीक्षण में उच्चतर स्वास्थ्य पाया गया है। ज्ञान तंत्र भी वैदिक काल का अनुसरण करने वाला है। बर्तन और ईंटों का उपयोग भी वैदिक सभ्यता की निरंतरता बताता है। आर्यों पर हड़प्पा सभ्यता नष्ट करने के आरोप हैं। हड़प्पा को प्राचीन और ऋग्वैदिक सभ्यता को परवर्ती सिद्ध करने की कसरत भी पुरानी है।

भारत रत्न पीवी काणो ने **'धर्मशास्त्र के इतिहास'** में वैदिक संहिताओं का काल 4000–1000 ईसा पूर्व तक बताया है। ऋग्वेद का कुछ भाग पांच हजार साल से भी पुराना है। अथर्ववेद और तैत्तिरीय संहिता 4 हजार ईसा पूर्व के आसपास हो सकते हैं। भारत के लोग उस समय भी रथारूढ़ थे। रथ का उपयोग ऋग्वेद के रचनाकाल से भी प्राचीन है। घोड़े उन्हें खींचते थे। घोड़े विदेशी नहीं भारतीय आर्य सम्पदा थे। मैक्डानल और कीथ ने 'वैदिक इंडेक्स' (खण्ड 1) में लिखा है, 'सिंधु और सरस्वती तट के घोड़े, मूल्यवान थे।'

ऋग्वेद में घोड़े के तमाम मंत्र हैं। ऋषि इंद्र को अश्वपति कहते हैं और अपने लिए घोड़ा मांगते हैं। एक अन्य मंत्र में वह घोड़े के साथ जौ भी मांगते हैं। एक मंत्र में अच्छा घोड़ा रथ के आगे–आगे चलता है। घोड़ा समृद्धि और गति का प्रतीक है। रथ निजी यात्रा के उपकरण थे और युद्ध के भी। ऋग्वेद में घोड़ा और रथ की सफाई के भी उल्लेख हैं। घोड़ा और रथ भारत के मन की सुंदर अभिलाषा हैं। उपनिषद् दर्शन ग्रंथ हैं, लेकिन दर्शन बोध में इंद्रियां घोड़े हैं और मन लगाम। सूर्य भी रथ पर चलते हैं। उसे सात घोड़े खींचते हैं। काल अनुभूति है, पदार्थ नहीं।

काल भी रथ पर चलते हैं। अथर्ववेद के कालसूक्त में 'ज्ञानी ही कालरथ पर बैठ सकते हैं।' जिसके पास रथ वही श्रेष्ठ संपन्न। ऋग्वेद में सिंधु नदी के बहाव की तीव्रता को घोड़ी की गति की उपमा दी गई है। वैदिक पूर्वज घोड़ों को खेती में प्रयोग नहीं करते थे। यूरोप में घोड़े खेती के काम भी आते थे। रथ सुमेरी सभ्यता में भी थे, परन्तु उनके पहियों में आरे नहीं थे। भारतीय रथों में आरे थे। वे हल्के थे। बागपत में मिला दो हजार साल पुराना रथ भारत के प्राचीन वैभव और वैदिक सभ्यता का मुख्य साक्ष्य है।

भारत के मुठ्ठी भर स्वयंभू विद्वान् ही आर्यों को विदेशी बताते रहे हैं। 1922 तक सिंधु सभ्यता की जानकारी नहीं थी। विलियम जोंस ने 'रॉयल सोसाइटी ऑफ बंगाल' (1786) में संस्कृत को ग्रीक और लैटिन से भी समृद्ध भाषा बताया था, लेकिन संस्कृत को किसी नई भाषा का विकास बताया। दुनिया की सर्वाधिक विकसित संस्कृत भाषा सामने थी, लेकिन संस्कृत को मूल भाषा मानने से यूरोपीय नस्लवाद को कष्ट होता इसलिए दूसरी भाषा की चर्चा जरूरी थी। इसी कल्पित भाषा का नाम इंडो यूरोपियन चल निकला। इसे बोलने वाले जनसमूह और भाषा के मूल स्थान की समस्या पेचीदा थी। आर्यों की मूल भूमि भारत से बाहर बताने के लिए जर्मनी, हंगरी, साइबेरिया, ओल्गा नदी क्षेत्र, पामीर और एशिया माइनर तक दिमाग दौड़ाया गया। वे सिद्ध करना चाहते थे कि ज्ञात क्षेत्र के निवासी आर्यों ने ईरान के रास्ते आकर भारत पर आक्रमण किया। जोंस की बातें सुविधाजनक थीं। कथित इंडो यूरोपीय भाषा के आधार पर इंडो यूरोपीय नस्ल की कल्पना की गई। इसी फर्जीवाड़े का शिकार बने भारतीय आर्य।

भारत सरकार को कराची–लाहौर के मध्य रेलवे के लिए ईंटें चाहिए थीं। 1922 की हड़प्पा खुदाई में एक नगर मिला। भारतीय पुरातत्व विभाग ने ओर खुदाई की। सिंधु सभ्यता का पता चला। यहां से लगभग 600 किलोमीटर दूर मोहनजोदड़ो था। 1925 में मैके ने मोहनजोदड़ो से लगभग 100 किमी दूर चन्हुदाड़ो का उत्खनन कराया। हड़प्पा, मोहनजोदड़ो और चन्हुदाड़ों से प्राप्त सामग्री पर सिंधु सभ्यता का विवेचन हुआ। भारतीय सभ्यता का विकास सिंधु, सरस्वती और गंगा आदि नदियों के तट पर हुआ है। इन नदियों के स्तुतिगान ऋग्वेद में भी हैं। मार्शल ने भी इन्हीं नदियों के नाम लिए हैं। उत्तर पूरब में इस सभ्यता के विशेष रोपण और अफगानिस्तान व पंजाब तक मिले हैं और बिहार–बक्सर की गंगा घाटी तथा बंगाल, गुजरात के लोथल व राजस्थान के काली बंगन में भी। यह सभ्यता सिंधु घाटी तक ही सीमित नहीं थी। मेरठ,अम्बाला–रोपड़, सूरत तक इसका विस्तार था। हड़प्पा सभ्यता का ह्रास लगभग 1750 ईसा पूर्व है। तब सरस्वती जलहीन है। ऋग्वेद और यजुर्वेद में सरस्वती उफना रही हैं। ऋग्वेद की रचना और सभ्यता का विकास 1750 ईसा पूर्व से बहुत प्राचीन है। बागपत व सिनौली के ताजे अध्ययन वैदिक सभ्यता के साक्ष्य हैं।

अखिल भारतीय प्रसार वाली सभ्यता के साक्ष्य गर्व लायक थे, लेकिन 1926 में रामचंद्र प्रसाद ने मोहनजोदड़ो से प्राप्त तथ्यों व कंकालों के बहाने आर्यों पर सभ्यता विनाश का आरोप लगाया। 1926 का साल स्वाधीनता संग्राम का तनाव समय है। यूरोपीय विद्वान् सिद्ध करना चाहते थे कि अंग्रेज विदेशी तो आर्य भी विदेशी। ब्रिटिश पुरातत्वविद् ह्वीलर ने भी इस झूठ को प्रचारित किया, लेकिन वह हमले का कोई प्रमाण नहीं दे सके। भारत के वेद, पुराण, लोक कथा या महाकाव्य सहित सभी प्राचीन उपाख्यानों में आर्यों

के विदेशी होने का कोई उल्लेख नहीं। डॉ. अम्बेडकर ने प्रश्न उठाया था कि आर्य विदेशी हैं तो नदियों को माता क्यों कहते हैं? भारत का मन सांस्कृतिक उत्तराधिकार को लेकर सजग नहीं है।

वैदिक सभ्यता की निरंतरता में हड़प्पा है और हड़प्पा की निरंतरता में चन्द्रगुप्त मौर्य। ब्रिटिश समुदाय शेक्सपियर आदि का भव्य स्मारक बनाते हैं। हम राष्ट्रीय एकीकरण के प्रथम शासक चन्द्रगुप्त मौर्य व कौटिल्य को याद भी नहीं करते। हम अशोक, पतंजलि, वाल्मीकि और व्यास को भी कहां याद करते हैं। सांस्कृतिक स्मृति ही राष्ट्रीय स्वाभिमानी सम्पदा है।

(लेखक के लेख में कुछ तथ्यों पर हमारी सहमति नहीं है। पहला वेदों में सरस्वती शब्द से नदी अर्थ ग्रहण करना से हमारी असहमति है। क्यूंकि वेदों में इतिहास और भूगोल आदि की पुस्तक नहीं हैं। दूसरा वेदों की उत्पत्ति का काल 1750 वर्ष ईसापूर्व नहीं हैं। अपितु एक अरब 96 करोड़ वर्ष पहले सृष्टि की रचना के साथ ही वेदों का प्रकाश हुआ था। तीसरा लेखक ने ऋग्वेद और अथर्ववेद की रचना का काल भिन्न बताया है। यह भी असत्य है। क्योंकि चारों वेद एक ही काल में प्रकाशित हुए हैं। फिर भी लेख में बहुत सरे तथ्य सत्य है। – डॉ विवेक आर्य)

****

www.ved-yog.com

(वेद योग चौरीटेबल ट्रस्ट द्वारा संचालित)

चारों वेद, महर्षि दयानन्द के वेदभाष्य सहित, तथा वेदों का अंग्रेजी अनुवाद, महर्षि दयानन्द का सम्पूर्ण साहित्य, दर्शन, उपनिषद् तथा अन्य आर्ष ग्रन्थ वेबसाईट पर निःशुल्क उपलब्ध।

मकर संक्रांति पर्व आया है

शिशिर का शीत आशातीत सब पर पड़ रहा है,
हेमंत के हठ से हिम की चादर बिछी जाती है।
रवि का प्रताप प्रतिपल प्रबल हो रहा है और,
दिन की जवानी दिन दिन बढ़ती ही जाती है।
मोड़ लिया है रथ भगवान भुवन भास्कर ने,
दक्षिण से उत्तर को धूल उड़ती नजर आती है।
मकर की राशि में जब पृथ्वी करती है संक्रमण,
लोक में यह सूर्य की मकर संक्रांति कहलाती है।।

दीन वित्तहीन जन शीत सहन कैसे करें,
कितनी ही रातें ठिठुर कठिनाई से काटी हैं।
तिल तैल तूल गुड़ आदि उष्ण वस्तुएं सब,
शीत के निवारण हित ही जाती सदा बांटी हैं।
कितनी समुन्नत सभ्य संस्कृति यहां की देखो,
सिंचित समाजवाद से हुई भारत की माटी है।
पर्व यह सनातन है सार्वभौम सभी मानवों का,
देश देशांतर में फैली इस की परिपाटी है।।

वेद और पुराण सहित विविध धर्म ग्रंथों में,
पर्व मकर संक्रांति का महत्व बहुत गाया है।
यह है दिनमान की उत्तरायण संक्रमण तिथि,
इसी को प्रकाश मार्ग, देवयान बतलाया है।
तजते निज देह उत्तरायण में मुमुक्षु यदि,
उनकी पुण्यात्मा ने उत्तम मोक्ष पद पाया है।
खिचड़ी तिल मोदक कंबलादि के शुभ दान का,
यज्ञादि के विधान का यह महापर्व आया है।।

– वेद कुमार दीक्षित

10 जनवरी अंतरराष्ट्रीय हिंदी दिवस पर विशेष

सवाल हिंदी का ही नहीं देवनागरी का भी

– अखिलेश आर्येन्दु

तमाम सम सामयिक मुद्दों के बीच राष्ट्रभाषा का मुद्दा पीछे छूटता रहता है। यह न तो सरकार, एनजीओ और आम लोगों के लिए कोई मायने रखता है और न तो मीडिया के लिए। बात कर रहा हूं हिंदी और देवनागरी पर मंडराते संकट पर। तमाम लोग हिंदी में बेतहांसा अंग्रेजी शब्दों के साथ लिखने और बोलने को एक जरूरत मानते हैं तो ऐसे तमाम लोग हैं जो इसे भाषा के प्रति जनता और सरकार की संवेदनहीनता। मेरे विचार से यह भाषा और संस्कृति के प्रति संवेदनहीनता और स्वाभिमानहीनता है। गौरतलब है तमाम लोग इसे संकट नहीं मानते। ध्यान देने वाली बात यह है कि भारत के करोड़ों लोगों के जरिए बोली जाने वाली भाषा हिंदी जो धीरे–धीरे हिंग्रेजी के रूप में बदल रही है, आज मीडिया की मुंहबोली बन गई है। सबसे मजेदार बात यह है कि जिस नई भाषा को आम आदमी अपनी नई भाषा कहता है, वह देवनागरी लिपि और यूरोपीय लिपि दोनों को मिलाकर लिखी जाने लगी है। यानी मिलावट की नई भाषा बोली और लिखी तो जा ही रही है, वह भारतीय समाज की भविष्य की भाषा के रूप में भी स्वीकार होती जा रही है। और तर्क दिया जा रहा है भाषा जल की तरह होती है उसे बहते रहने देना चाहिए। लेकिन ऐसा तर्क करने वाले यह भूल जाते हैं कि बहते हुए जल के लिए भी तटबंध जरूरी है वरना ऐसा जल किसी काम का नहीं आता। जाहिरतौर पर भाषा के मामले में भी यही बात है। नई मिलावट की भाषा उस जल की तरह है जिसकी अपनी पहचान और सिद्धांत नहीं है और न तो कोई व्याकरण यानी मर्यादा ही।

मिलावट किसी भी चीज में हो, वह कई स्तरों पर समस्या पैदा करती है। हिंदी और दूसरी भारतीय भाषाओं में हो रही अंग्रेजी शब्दों की मिलावट से भी ऐसी ही समस्याएं पैदा हो रही हैं, जो समाज, संस्कृति, भाषा, भाव, अभिव्यक्ति और विषय को प्रभावित कर रही हैं। लेकिन बात इतनी ही नहीं है। मिलावट महज शब्दों की नहीं है, बल्कि लिपि की भी है। दो लिपियों को मिलाकर जिस नई भाषा को लिखने की कवायद की जा रही है, उनकी बनावट व स्वभाव और परिवेश दोनों एकदम अलग तरह के हैं। जिस तरह से दो नावों पर एक साथ यात्रा करने वाले व्यक्ति की जो दशा होती है, ऐसा ही दो लिपियों को लेकर लिखी जा रही हिंदी की भी हो रही है। भारत में हिंदी के अलावा कोई और भाषा दो लिपियों में नहीं लिखी जाती है। दो लिपियों में लिखी जा रही यह तथाकिथित भाषा का व्याकरण कैसे निर्धारित होगा, इसका समाधान अभी तक नहीं किया जा सका है। इस पर उन सभी लोगों को क्या विचार नहीं करना चाहिए जो हिंग्रेजी के झंडाबरदार हैं? विचारणीय बात यह भी है कि अखबार या चौनल इस विसंगति के प्रति आंख मूंदे हुए हैं जो बहुत चिंता की बात है। भाषा वैज्ञानिकों का मानना है, बिना मिलावट वाली वस्तु जैसे सबसे अच्छी होती है, उसी तरह भाषा और लिपि भी होती है। और लिपि के मामले में देवनागरी लिपि जिस तरह से वैज्ञानिक, व्याकरणिक और सरल है उसी तरह हिंदी भी वैज्ञानिक और सरल है। लेकिन हिंग्रेजी के बारे में किस तरह का मानक होगा, होगा भी कि नहीं, इस सवाल का जवाब किसी के पास नहीं है। भारतीय समाज में भाषा के प्रति संवेदनशीलता न के बराबर है। यही कारण है कि तमिलनाडु या कर्नाटक को छोड़कर भाषा को बचाने वाला कोई आंदोलन नहीं हुआ। हिंदी को बचाने का आंदोलन आजादी के पहले दशक में गैर हिंदी भाषा भाषी प्रदेशों में भले हुआ हो, लेकिन हिंदी प्रदेशों में नहीं हुआ। यही कारण है हिंदी में मिलावट मनमानी तरीके से होती गई। वह चाहे हिंदी के सरलीकरण के नाम पर हुआ हो या शब्द–भण्डार बढ़ाने के नाम पर।

हिंदी पढ़कर देश सेवा करने वाले हिंदी सेवियों की वैसी कद्र नहीं है जैसी अंग्रेजी पढ़कर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों में कार्य करने वाले। मेरा अनुभव है, हिंग्रेजी या हिंग्लिश के पुजारी आज के बाजार के मुताबिक

अपने कार्य में फिट बैठते हैं। और वे ही समाज में प्रतिष्ठा हासिल करने के अधिकारी होते हैं। लेकिन देवनागरी और शुद्ध हिंदी का प्रयोग करने वालों को पिछड़ा हुआ और कमजोर समझा जाता है। सोशल मीडिया, इलेक्ट्रानिक्स प्रचार–प्रसार के माध्यमों और अधिकांश हिंदी अखबारों की भाषा हिग्लिश हो गई है। लेकिन माना इन्हें हिंदी का जाता है। दिल्ली के एक नामी अखबार की भाषा पिछले 30 सालों से पूरी तरह हिंग्रेजी बन गई है। देवनागरी और यूरोपीय लिपि में लिखे वाक्य अजीब होते हुए भी लोगों के जरिए पसंद किए जा रहे हैं। इसके बावजूद कि अखबार की जो बनावट और सजावट है, वह पहले जैसे नहीं रह गई है। दिल्ली से छपने वाले कुछ अखबारों में ही सहज–सरल हिंदी का इस्तेमाल किया जाता है लेकिन इन अखबारों की प्रसार संख्या हिंगलिश में निकलने वाले अखबारों की प्रसार संख्या से बहुत कम है।

हिंदी का संकट लगातार बढ़ रहा है। और वह संकट है देवनागरी लिपि के साथ यूरोपीय लिपि का हिंदी अखबारों में बढ़ता चलन। हिंगरेजीकरण हिंदी का केवल भाषा के स्तर पर ही नहीं हो रहा है, बल्कि लिपि के स्तर पर भी बहुत तेजी के साथ हो रहा है। हिंदी में अंग्रेजी की मिलावट में बढ़ता यह चलन बहुत गंभीर है। यह भाषाई मिलावट दस–बीस सालों से नहीं हो रही है, बल्कि आजादी मिलने के बाद ही हिंदी वाले ही बोलते वक्त अंग्रेजी शब्दों का इस्तेमाल गाहे–बगाहे करने लगे थे। फिल्म, दूरदर्शन, रेडियो, अखबार में कहीं–कहीं अंग्रेजी शब्दों का इस्तेमाल होने लगा था। लेकिन यह छिटपुट ही था। हिंदी फिल्मों ने हिंदी को सरल रूप दिया, लेकिन यह सरलीकरण अंग्रेजी को लेकर हुआ। इसका परिणाम यह हुआ, हिंदी का रूप–रंग, संस्कृति, शैली और वैज्ञानिक स्वरूप बदलने लगा। मुल्क की आजादी का पहला दशक और आज सातवें दशक में हिंदी बदलते–बदलते हिंग्रेजी या हिंग्लिश के रूप में आ गई है। आज की हिंदी भले ही समृद्ध दिखती है, लेकिन उसके स्वरूप और संस्कृति का वह रूप पहले जैसा नहीं रह गया है। जिस विकृत स्वरूप में हिंदी आज है, वह हिंदी तो नहीं कही जा सकती।

समृद्ध भाषा धीरे–धीरे किसी अवैज्ञानिक भाषा के असर से विकृत होती है, इसका दुनिया में यदि कोई उदाहरण हमारे सामने है तो हिंदी का है। अच्छी हिंदी की घटती संख्या, लोकप्रियता, प्रचार और बाजारीकरण को लेकर हिंदी के झंड़ाबरदार ही संवेदित नहीं हैं। हिंदी इलाके का आम आदमी अब अपनी आंचलिक बोली–भाषा में बोलने के बजाय हिंग्रेजी में बोलना गौरव महसूस करता है। आज की पीढ़ी को अच्छी व शुद्ध हिंदी सिखायी ही नहीं जा रही है तो शुद्ध हिंदी वह बोले कैसे? उसकी पढ़ाई–लिखाई, मनोरंजन की भाषा, राजनीति की भाषा और ज्ञान–विज्ञान की भाषा अंग्रेजी या हिंग्रेजी है। गांव–गिरांव का अनपढ़ आदमी जो बीस साल पहले औरत–मर्द बोला करता था वह आज लेडिश–जेंड्स बोलता है। याचिका को पिटेशन, कचहरी को कोर्ट, फिटफिटिया को मोटर साईकिल या बाईक, माट साहब या मुंशीजी को टीचरजी, पत्नी को वाईफ, लड़की को गल्स, भाषा को लैंगवेज, रसोई को किचन, सड़क को रोड, पानी को वाटर, दूध को मिल्क, ईतवार को संडे, बाजार को मार्केट और शादी को मैरेज जैसे अंग्रेजी शब्दों का इस्तेमाल आमतौर पर करने लगा है। यानी हिंदी या अवधी–भोजपुरी, ब्रज, छत्तीसगढ़ी बोलने वाला व्यक्ति भी अपनी भाषा–बोली से कटकर हिंग्रेजीकरण का शिकार हो रहा है। आंचलिक बोलियों की मिठास से बेखबर आज की पीढ़ी अपनी भाषा–बोली के साथ अपनी गौरवशाली संस्कृति से भी दूर होती जा रही है। मोबाइल ने इस दूरी को और भी बढ़ा दी है।

तीन दशक पहले हिंदी क्षेत्र का व्यक्ति अपनी आंचलिक भाषा–बोली का इस्तेमाल स्वाभिमान के साथ जब करता था तब वह अपनी माटी और थाती को सजोए हुए था, लेकिन आधुनिकता और विकास के नाम पर वह उसी रास्ते पर आगे बढ़ रहा है जिस रास्ते पर शहरी हिंदी क्षेत्र का पढ़ा–लिखा व्यक्ति। अंग्रेजी या हिंग्लिश ने गांव की रसोई, हाट–बाजार, चौपाल और आंगन तक पांव पसार लिए हैं। गांवों में कुकुरमुत्ते की तरह खुले अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों की हालात यह है कि उन्हें न ठीक से हिंदी की जानकारी है और न तो अंग्रेजी की ही। देवनागरी लिपि के अंकों की जानकारी तो है ही नहीं।

हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि का यह संकट लगातार बढ़ रहा है। लेकिन हम हिंदी वाले इस संकट को महसूस ही नहीं करते। ऐसे में हिंदी के मौलिक स्वरूप की हिफाजत कौन करेगा, एक बड़ा प्रश्न है।

बाजारों में लगे नाम–पट्ट, घरों पर लगे नाम–पट्ट, सड़कों पर गड़े किलोमीटर के पत्थर पर लिखे किलोमीटर, सड़क किनारे पेड़ों पर लिखे पेड़ों के नाम, वाहन संख्या और शादी कार्ड शहरों–कस्बों में ही नहीं, बल्कि गांवों में अंग्रेजी या हिंग्रेजी में लिखे जाने लगे हैं। हिंदी क्षेत्र के बड़े शहरों, कस्बों और नगरों से निकलने वाले छोटे–बड़े अखबारों की भाषा हिंग्रेजी हो गई है। सरलीकरण के नाम पर हिंदी की आत्मा सूखती जा रही है। लेकिन इसकी तरफ किसी का ध्यान नहीं है। जब हिंदी की यह दुर्दशा है तो हिंदी की आंचलिक भाषा–बोलियों की क्या दशा हो रही है, समझा जा सकता है।

हिंदी फिल्मों, अखबारों, टीवी चौनलों और दूसरे सूचना के माध्यमों में आज हिंग्रेजीकरण की होड़ लगी हुई है। जिसका असर सीधे आम आदमी पर दिखाई दे रहा है। इसे नए जमाने की भाषा कहा जा रहा है। इस भाषाई मिलावट को समाज ने हर क्षेत्र में स्वीकार किया है। अब सवाल उठता है क्या हिंदी के हिंग्रेजीकरण को वक्त के साथ स्वीकार करना चाहिए या हिंदी को बचाने के लिए आंदोलन चलाना चाहिए? लेकिन भाषाई संवेदहीनता के समय में हिंदी को बचाने के लिए कौन आगे आएगा?

हिंदी के मेरे दोस्त जो हिंदी के हिंग्रेजीकरण पर बहुत चिंतित रहते हैं और हिंदी को बचाने में लगे हुए हैं, हिंदी की इस हालात के लिए हिंदी क्षेत्र के प्रत्येक व्यक्ति को जिम्मेदार मानते हैं। उनका कहना है, सूचना के सभी माध्यम आम आदमी के लिए हैं। आम आदमी की जिम्मेदारी जैसे समाज में बढ़ती अराजकता को रोकने के लिए है। जैसे कोई घटना घटने पर उसे आंख–कान खोले रखने के लिए चौकन्ना रखना होता है उसी तरह अपनी भाषाई थाती को सजोए रखने के लिए जागरूकता रखनी चाहिए। क्योंकि यह पुरुखों की थाती है जिसे हर व्यक्ति को सजोए रखना चाहिए। कहने का मतलब, हिंदी को बचाने की जिम्मेदारी जितनी हिंदी सेवकों की है, हिंदी अखबारों, हिंदी चौनलों, रेडियो. फिल्मों और सोशल मीडिया की है उतनी ही आम आदमी की है। यानी हिंदी को हम बचाएंगे, तभी बचेगी।**********

हिंदी महिमा

हिंदी जननी हिंद की, गाथा हिंद महान।
एक छोर तुलसी खड़े, दूजे पर रसखान।।

चटक-मटक जाने नहीं, हिंदी सादा रूप ।
मीठी-मीठी यों लगे, ज्यों सर्दी की धूप ।।

हिंदी भाषा प्रेम की, माँ का लाड़ दुलार ।
भला-बुरा जितना कहो, भर-भर बांटे प्यार ।।

महादेवि दिनकर कहीं, तुलसी सूर प्रसाद।
हिंदी छंदों की लड़ी, छंद मुक्त आज़ाद ।।

हिंदी शिव की आरती, रामलला परसाद ।
उत्तर दक्खिन छिड़, रहा यूं ही वाद-विवाद।।

हिंदी को 'हिन्डी' कहें, कितने पूत महान ।
सूट- साट सा डाट कर, काग हुए विद्वान ।।

हिंदी के झण्डे तले, एक हुए सब वीर ।
सबने मिलजुल कर सही, आज़ादी की पीर।।

हिंदी रतिमय सुंदरी, हिंदी रूप मनोज ।
हिंदी के हर शब्द में, प्रेम - प्रीत सद् ओज।।

हिंदी राधा गोपिका, श्यामल रंग मुरारि ।
वृन्दावन यमुना पुलिन, मन कदम्ब की डारि

कहां मिला किसको मिला, हिंदी बिन आधार ?
बिन हिंदी ज्यों रेत पर, नींव धरे संसार ।।

– भारत भूषण आर्य

चमत्कारी त्रिफला

त्रिफला तीन श्रेष्ठ औषधियों हरड, बहेडा व आंवला के पिसे मिश्रण से बने चूर्ण को कहते है। जो की मानव–जाति को हमारी प्रकृति का एक अनमोल उपहार है। त्रिफला सर्व रोगनाशक रोग प्रतिरोधक और आरोग्य प्रदान करने वाली औषधि है। त्रिफला से कायाकल्प होता है त्रिफला एक श्रेष्ठ रसायन, एन्टिबायोटिक व ऐन्टिसेप्टिक है इसे आयुर्वेद का पेन्सिलिन भी कहा जाता है। त्रिफला का प्रयोग शरीर में वात पित्त और कफ़ का संतुलन बनाए रखता है। यह रोज़मर्रा की आम बीमारियों के लिए बहुत प्रभावकारी औषधि है सिर के रोग, चर्म रोग, रक्त दोष, मूत्र रोग तथा पाचन संस्थान में तो यह रामबाण है। नेत्र ज्योति वर्धक, मल–शोधक,जठराग्नि–प्रदीपक, बुद्धि को कुशाग्र करने वाला व शरीर का शोधन करने वाला एक उच्च कोटि का रसायन है। आयुर्वेद की प्रसिद्ध औषधि त्रिफला पर भाभा एटोमिक रिसर्च सेंटर, ट्राम्बे,गुरू नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर और जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय में रिसर्च करनें के पश्चात यह निष्कर्ष निकाला गया कि त्रिफला कैंसर के सेलों को बढ़नें से रोकता है।

हरड

हरड को बहेड़ा का पर्याय माना गया है। हरड में लवण के अलावा पाँच रसों का समावेश होता है। हरड बुद्धि को बढाने वाली और हृदय को मजबूती देने वाली,पीलिया ,शोध ,मूत्राघात,दस्त, उलटी, कब्ज, संग्रहणी, प्रमेह, कामला, सिर और पेट के रोग, कर्णरोग, खांसी, प्लीहा, अर्श, वर्ण, शूल आदि का नाश करने वाली सिद्ध होती है। यह पेट में जाकर माँ की तरह से देख भाल और रक्षा करती है। भूनी हुई हरड के सेवन से पाचन तन्त्र मजबूत होता है। हरड को चबाकर खाने से अग्नि बढाती है। पीसकर सेवन करने से मल को बाहर निकालती है। जल में पका कर उपयोग से दस्त, नमक के साथ कफ, शक्कर के साथ पित्त, घी के साथ सेवन करने से वायु रोग नष्ट हो जाता है। हरड को वर्षा के दिनों में सेंधा नमक के साथ, सर्दी में बूरा के साथ, हेमंत में सौंठ के साथ, शिशिर में पीपल, बसंत में शहद और ग्रीष्म में गुड के साथ हरड का प्रयोग करना हितकारी होता है। भूनी हुई हरड के सेवन से पाचन तन्त्र मजबूत होता है। 200 ग्राम हरड पाउडर में 10–15 ग्राम सेंधा नमक मिलाकर रखे। पेट की गड़बडी लगे तो शाम को 5–6 ग्राम फांक लें । गैस, कब्ज़, शरीर टूटना, वायु–आम के सम्बन्ध से बनी बीमारियों में आराम होगा ।

बहेडा

बहेडा वात,और कफ को शांत करता है। इसकी छाल प्रयोग में लायी जाती है। यह खाने में गरम है,लगाने में ठण्डा व रूखा है, सर्दी,प्यास,वात , खांसी व कफ को शांत करता है यह रक्त, रस, मांस ,केश, नेत्र–ज्योति और धातु वर्धक है। बहेडा मन्दाग्नि ,प्यास, वमन कृमी रोग नेत्र दोष और स्वर दोष को दूर करता है बहेडा न मिले तो छोटी हरड का प्रयोग करते है

आंवला

आंवला मधुर शीतल तथा रूखा है वात पित्त और कफ रोग को दूर करता है। इसलिए इसे त्रिदोषक भी कहा जाता है। आंवला के अनगिनत फायदे हैं। नियमित आंवला खाते रहने से वृद्धावस्था जल्दी से नहीं आती। आंवले में विटामिन सी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है,इसका विटामिन किसी सी रूप (कच्चा उबला या सुखा) में नष्ट नहीं होता, बल्कि सूखे आंवले में ताजे आंवले से ज्यादा विटामिन 'सी' होता है। अम्लता का गुण होने के कारण इसे आँवला कहा गया है। चर्बी, पसीना, कपफ, गीलापन और पित्तरोग आदि को नष्ट कर देता है। खट्टी चीजों के सेवन से पित्त बढता है लेकिन आँवला और अनार पित्तनाशक है। आँवला रसायन अग्निवर्धक, रेचक, बुद्धिवर्धक, हृदय को बल देने वाला नेत्र ज्योति को बढाने वाला होता है।

त्रिफला बनाने के लिए तीन मुख्य घटक हरड, बहेड़ा व आंवला है। इसे बनाने में अनुपात को लेकर अलग अलग औषधि विशेषज्ञों की अलग अलग राय पाई गयी है –

कुछ विशेषज्ञों कि राय है की –

तीनों घटक (यानी के हरड, बहेड़ा व आंवला) सामान अनुपात में होने चाहिए कुछ विशेषज्ञों कि राय है की यह अनुपात एक, दो तीन का होना चाहिए कुछ विशेषज्ञों कि राय में यह अनुपात एक, दो चार का होना उत्तम है और कुछ विशेषज्ञों के अनुसार यह अनुपात बीमारी की गंभीरता के अनुसार अलग–अलग मात्रा में होना चाहिए ।एक आम स्वस्थ व्यक्ति के लिए यह अनुपात एक, दो और तीन (हरड, बहेडा व आंवला) संतुलित और ज्यादा सुरक्षित है। जिसे सालों साल सुबह या शाम एक एक चम्मच पानी या दूध के साथ लिया जा सकता है। सुबह के वक्त त्रिफला लेना पोषक होता है जबकि शाम को यह रेचक (पेट साफ़ करने वाला) होता है।

'ऋतू के अनुसार सेवन विधि :–'

1.शिशिर ऋतू में (14 जनवरी से 13 मार्च) 5 ग्राम त्रिफला को आठवां भाग छोटी पीपल का चूर्ण मिलाकर सेवन करें।

2.बसंत ऋतू में (14 मार्च से 13 मई) 5 ग्राम त्रिफला को बराबर का शहद मिलाकर सेवन करें।

3.ग्रीष्म ऋतू में (14 मई से 13 जुलाई) 5 ग्राम त्रिफला को चोथा भाग गुड़ मिलाकर सेवन करें।

4.वर्षा ऋतू में (14 जुलाई से 13 सितम्बर) 5 ग्राम त्रिफला को छठा भाग सैंधा नमक मिलाकर सेवन करें।

5.शरद ऋतू में (14 सितम्बर से 13 नवम्बर) 5 ग्राम त्रिफला को चोथा भाग देशी खांड/शक्कर मिलाकर सेवन करें।

6.हेमंत ऋतू में (14 नवम्बर से 13 जनवरी) 5 ग्राम त्रिफला को छठा भाग सौंठ का चूर्ण मिलाकर सेवन करें।

अथवा त्रिफला व ईसबगोल की भूसी दो चम्मच मिलाकर शाम को गुनगुने पानी से लें इससे कब्ज दूर होता है।

इसके सेवन से नेत्रज्योति में आश्चर्यजनक वृद्धि होती है।

सुबह पानी में 5 ग्राम त्रिफला चूर्ण साफ़ मिट्टी के बर्तन में भिगो कर रख दें, शाम को छानकर पी ले। शाम को उसी त्रिफला चूर्ण में पानी मिलाकर रखें, इसे सुबह पी लें। इस पानी से आँखें भी धो ले। मुँह के छाले व आँखों की जलन कुछ ही समय में ठीक हो जायेंगे।

शाम को एक गिलास पानी में एक चम्मच त्रिफला भिगो दे सुबह मसल कर नितार कर इस जल से आँखों को धोने से नेत्रों की ज्योति बढती है।

एक चम्मच बारीख त्रिफला चूर्ण, गाय का घी10 ग्राम व शहद 5 ग्राम एक साथ मिलाकर नियमित सेवन करने से आँखों का मोतियाबिंद, काँचबिंदु, द्रष्टि दोष आदि नेत्ररोग दूर होते है। और बुढ़ापे तक आँखों की रोशनी अचल रहती है।

त्रिफला के चूर्ण को गौमूत्र के साथ लेने से अफारा, उदर शूल, प्लीहा वृद्धि आदि अनेकों तरह के पेट के रोग दूर हो जाते है।

त्रिफला शरीर के आंतरिक अंगों की देखभाल कर सकता है, त्रिफला की तीनों जड़ीबूटियां आंतरिक सफाई को बढ़ावा देती हैं।

चर्मरोगों में (दाद, खाज, खुजली, फोड़े–फुंसी आदि) सुबह–शाम 6 से 8 ग्राम त्रिफला चूर्ण लेना चाहिए।

एक चम्मच त्रिफला को एक गिलास ताजा पानी मे दो– तीन घंटे के लिए भिगो दे, इस पानी को घूंट भर मुंह में थोड़ी देर के लिए डाल कर अच्छे से कई बार घुमाये और इसे निकाल दे। कभी कभार त्रिफला चूर्ण से मंजन भी करें इससे मुँह आने की बीमारी, मुहं के छाले ठीक होंगे, अरूचि मिटेगी और मुख की दुर्गन्ध भी दूर होगी ।

त्रिफला, हल्दी, चिरायता, नीम के भीतर की छाल और गिलोय इन सबको मिला कर मिश्रण को आधा किलो पानी में जब तक पकाएँ कि पानी आधा रह जाए और इसे छानकर कुछ दिन तक सुबह शाम गुड या शक्कर के साथ सेवन करने से सिर दर्द कि समस्या दूर हो जाती है।

त्रिफला एंटिसेप्टिक की तरह से भी काम करता है। इस का काढा बनाकर घाव धोने से घाव जल्दी भर जाते है।

त्रिफला पाचन और भूख को बढ़ाने वाला और लाल रक्त कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि करने वाला है। मोटापा कम करने के लिए त्रिफला के गुनगुने काढ़े में शहद मिलाकर ले।त्रिफला चूर्ण पानी में उबालकर, शहद मिलाकर पीने से चरबी कम होती है।

त्रिफला का सेवन मूत्र–संबंधी सभी विकारों व मधुमेह में बहुत लाभकारी है। प्रमेह आदि में शहद के साथ त्रिफला लेने से अत्यंत लाभ होता है।

त्रिफला की राख शहद में मिलाकर गरमी से हुए त्वचा के चकतों पर लगाने से राहत मिलती है।

5 ग्राम त्रिफला पानी के साथ लेने से जीर्ण ज्वर के रोग ठीक होते है।

5 ग्राम त्रिफला चूर्ण गोमूत्र या शहद के साथ एक माह तक लेने से कामला रोग मिट जाता है।

टॉन्सिल्स के रोगी त्रिफला के पानी से बार–बार गरारे करवायें।

त्रिफला दुर्बलता का नास करता है और स्मृति को बढाता है। दुर्बलता का नास करने के लिए हरड़, बहेडा, आँवला, घी और शक्कर मिला कर खाना चाहिए।

त्रिफला, तिल का तेल और शहद समान मात्रा में मिलाकर इस मिश्रण कि 10 ग्राम मात्रा हर रोज गुनगुने पानी के साथ लेने से पेट, मासिक धर्म और दमे की तकलीफे दूर होती है इसे महीने भर लेने से शरीर का सुद्धिकरन हो जाता है और यदि 3 महीने तक नियमित सेवन करने से चेहरे पर कांती आ जाती है।

त्रिफला, शहद और घृतकुमारी तीनो को मिला कर जो रसायन बनता है वह सप्त धातु पोषक होता है। त्रिफला रसायन कल्प त्रिदोषनाशक, इंद्रिय बलवर्धक विशेषकर नेत्रों के लिए हितकर, वृद्धावस्था को रोकने वाला व मेधाशक्ति बढ़ाने वाला है। दृष्टि दोष, रतौंधी (रात को दिखाई न देना), मोतियाबिंद, काँचबिंदु आदि नेत्ररोगों से रक्षा होती है और बाल काले, घने व मजबूत हो जाते हैं।

डेढ़ माह तक इस रसायन का सेवन करने से स्मृति, बुद्धि, बल व वीर्य में वृद्धि होती है।

दो माह तक सेवन करने से चश्मा भी उतर जाता है।

विधिः 500 ग्राम त्रिफला चूर्ण, 500 ग्राम देसी गाय का घी व 250 ग्राम शुद्ध शहद मिलाकर शरदपूर्णिमा की रात को चाँदी के पात्र में पतले सफेद वस्त्र से ढँक कर रात भर चाँदनी में रखें। दूसरे दिन सुबह इस मिश्रण को काँच अथवा चीनी के पात्र में भर लें।

सेवन–विधिः बड़े व्यक्ति 10 ग्राम छोटे बच्चे 5 ग्राम मिश्रण सुबह–शाम गुनगुने पानी के साथ लें दिन में केवल एक बार सात्त्विक, सुपाच्य भोजन करें। इन दिनों में भोजन में सेंधा नमक का ही उपयोग करे। सुबह शाम गाय का दूध ले सकते हैं।सुपाच्य भोजन दूध दलिया लेना उत्तम है.

मात्राः 4 से 5 ग्राम तक त्रिफला चूर्ण सुबह के वक्त लेना पोषक होता है जबकि शाम को यह रेचक (पेट साफ़ करने वाला) होता है। सुबह खाली पेट गुनगुने पानी के साथ इसका सेवन करें तथा एक घंटे बाद तक पानी के अलावा कुछ ना खाएं और इस नियम का पालन कठोरता से करें ।

सावधानीः दूध व त्रिफलारसायन कल्प के सेवन के बीच में दो ढाई घंटे का अंतर हो और कमजोर व्यक्ति तथा गर्भवती स्त्री को बुखार में त्रिफला नहीं खाना चाहिए।

घी और शहद कभी भी सामान मात्रा में नहीं लेना चाहिए यह खतरनाक जहर होता है।

त्रिफला चूर्णके सेवन के एक घंटे बाद तक चाय–दूध कोफ़ी आदि कुछ भी नहीं लेना चाहिये।

त्रिफला चूर्ण हमेशा ताजा खरीद कर घर पर ही सीमित मात्रा में (जो लगभग तीन चार माह में समाप्त हो जाये) पीसकर तैयार करें व सीलन से बचा कर रखे और इसका सेवन कर पुनः नया चूर्ण बना लें।

त्रिफला से कायाकल्प

कायाकल्प हेतु निम्बू लहसुन ,भिलावा, अदरक आदि भी है। लेकिन त्रिफला चूर्ण जितना निरापद और बढ़िया दूसरा कुछ नहीं है। आयुर्वेद के अनुसार त्रिफला के नियमित सेवन करने से कायाकल्प हो जाता है। मनुष्य अपने शरीर का कायाकल्प कर सालों साल तक निरोग रह सकता है, देखें कैसे ?

1 एक वर्ष तक नियमित सेवन करने से शरीर चुस्त होता है।

2 दो वर्ष तक नियमित सेवन करने से शरीर निरोगी हो जाता हैं।

3 तीन वर्ष तक नियमित सेवन करने से नेत्र–ज्योति बढ जाती है।

4 चार वर्ष तक नियमित सेवन करने से त्वचा कोमल व सुंदर हो जाती है ।

5 पांच वर्ष तक नियमित सेवन करने से बुद्धि का विकास होकर कुशाग्र हो जाती है।
6 छः वर्ष तक नियमित सेवन करने से शरीर शक्ति में पर्याप्त वृद्धि होती है।
7 सात वर्ष तक नियमित सेवन करने से बाल फिर से सफ़ेद से काले हो जाते हैं।
8 आठ वर्ष तक नियमित सेवन करने से वृद्धावस्था से पुनः योवन लोट आता है।
9 नौ वर्ष तक नियमित सेवन करने से नेत्र–ज्योति कुशाग्र हो जाती है और सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्तु भी आसानी से दिखाई देने लगती हैं।
10 दस वर्ष तक नियमित सेवन करने से वाणी मधुर हो जाती है यानी गले में सरस्वती का वास हो जाता है। **********

आर्ष क्रान्ति

पत्रिका के लिए

आर्य लेखक बन्धु

अपनी सर्वश्रेष्ठ

रचनाएँ भेंजे।

जटिल जीवन में सत्य को स्वीकार करने वाली एक कविता

चाहा मैंने कितना भी, जीवन का सच जान न पाया
चाहा मैंने कितना भी
अंधेरों को जीत न पाया, चाहा मैंने कितना भी
ईश्वर को भी खोज न पाया, चाहा मैंने कितना भी
अपने को भी समझ न पाया, चाहा मैंने कितना भी
सुन्दर मधुरम गीत न गाया, चाहा मैंने कितना भी
जग की माया समझ न पाया, चाहा मैंने कितना भी
नारी को मैं समझ न पाया, चाहा मैंने कितना भी
सबका हित मैं कब कर पाया, चाहा मैंने कितना भी
हर दिल में भी कब बस पाया, चाहा मैंने कितना भी
खुद में खुद को ढूंढ न पाया, चाहा मैंने कितना भी
प्रियजनों को रोक न पाया, चाहा मैंने कितना भी
हर चाहत को रोक न पाया, चाहा मैंने कितना भी
रोगों से भी कब लड़ पाया, चाहा मैंने कितना भी
घातों को भी रोक न पाया, चाहा मैंने कितना भी
हर दिल को न सुख पहुँचाया, चाहा मैंने कितना भी
स्वजनों को भी भूल न पाया, चाहा मैंने कितना भी
झूठ ईर्ष्या छोड़ न पाया, चाहा मैंने कितना भी
लहरों में भी कब लहराया, चाहा मैंने कितना भी
मौन सिद्धि न मैं कर पाया, चाहा मैंने कितना भी
पूरे जग से प्रेम न पाया, चाहा मैंने कितना भी
सत्य, शिवम में कब बन पाया, चाहा मैंने कितना भी
नहीं सुन्दरम भी बन पाया, चाहा मैंने कितना भी

– डॉ राकेश चक्र (एमडी,एक्यूप्रेशर एवं योग विशेषज्ञ)
शिवपुरी मुरादाबाद (उ.प्र.)
94562018

पाती आई है..

Dear Vedapriya Shastriji,
Saprem Namaste!

First of all I am sorry not writing in Hindi, since we do not have Hindi typing facility.

I've read your thought provoking editorial in Arsh Kranti Year 2, Issue 15 December 2019.
We commend your fearless spirit and dedicated love for Arya Samaj and Maharshi Dayanand Saraswati.Thank you and your colleagues for the service to the Vedic Movement.

I am Dr Veer Dev Bista, (M.A., Ph.D) a humble Snatak of Gurukul Jhajjar,Rohtak, Haryana and Gurukul Kangri University, Haridwar, former professor at Mahendra Sanskrit University, Kathmandu, Nepal and a former Principal at College of Vedic Studies - Arya pratinidhi Sabha,South Africa, Durban.

Since last 25 years professor of Eastern Studies at- Eastern Heritage Foundation,U.S.A. here in Atlanta,Georgia.

Of course I am not to concur with you one hunderd percent but you are right to the point that Arya Samaj is heading towards a terrible and disastrous future from where no return to the old glory. Right now visionless (I don't call them leaders) abductors, highjackers and selfish agents of Arya Samaj surrendering the pride and prestige of Samaj to RSS. By doing so they are commiting a unforgivable sins for which the future generation of Rishi devotees will pay the price. I have no doubt people will come and go but Maharshi Dayananad's Rishitwa-principles and visions- will live eternally.

In recent history ; after the passings of like Swami Omananad, Swami Sarvananad, Ramgopal Shalvale, Veererndra (in Punjab), Chandkaran Sharda(in Rajasthan), Swami Indravesh, Prof.Sher Singh and Raghuveer Singh Shastri , Samaj is without a leader.

In your article you did not offer any solutions either. Please find the positive notions.Compared to Buddhism(2500 years), Jainism(5000 years), Sikhism(500 years) New Vedic renaissance movement (Arya Samaj foundation 144years) is just a new born baby. **My deep concern is whether 5000 years later some "Vedapriya" will write about Maharshi Dayanand Saraswati or not?**
Thank you once again.
Always yours ,
Dr Veer Dev Bista,M.A.,Ph.D.
Professor-Eastern Heritage Foundation,U.S.A.